अनुराग
बाल पत्रिका

त्रैमासिक
अप्रैल-जून 2006

मूल्य : 10 रुपए
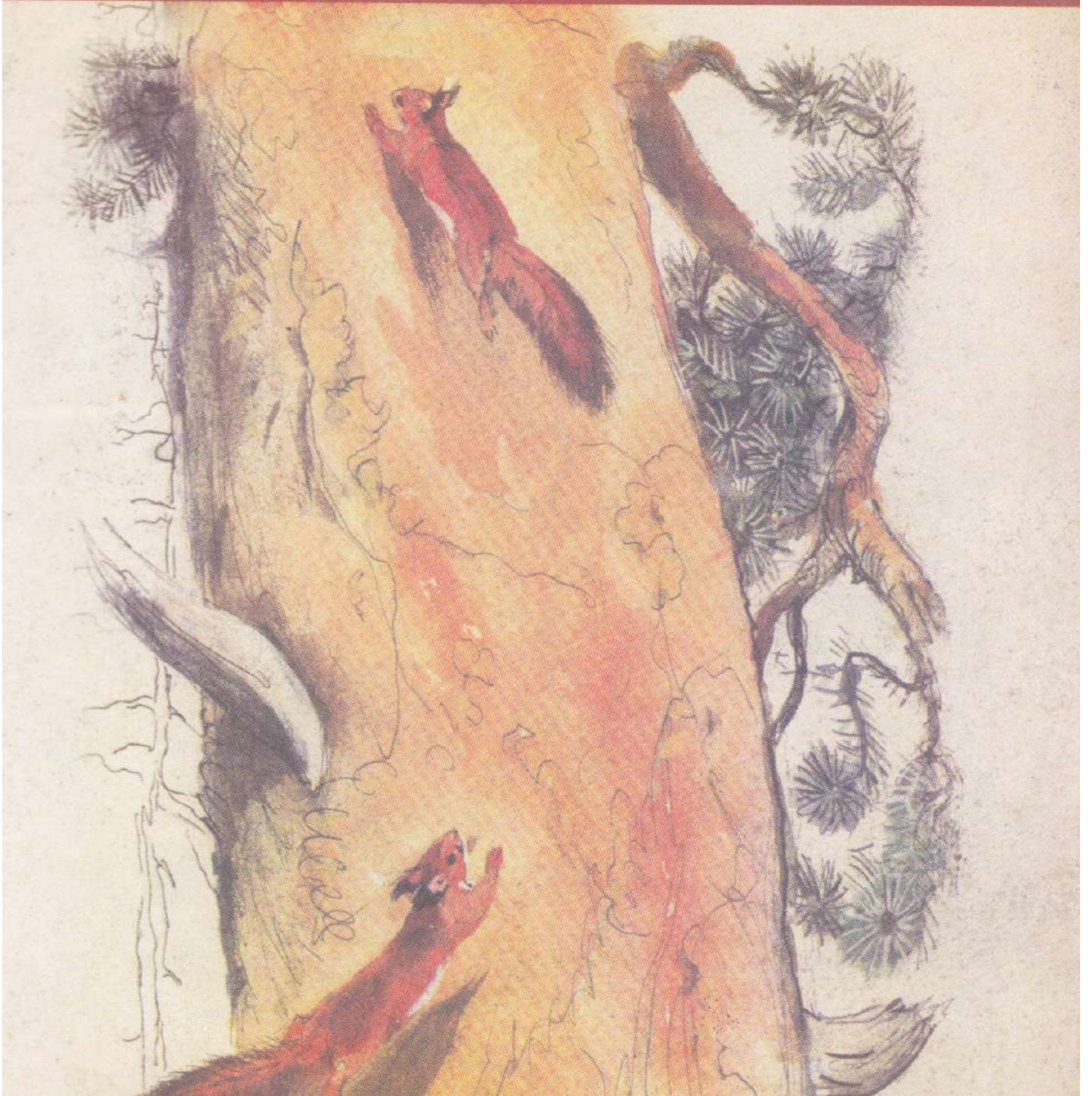
अप्रैल-मई-जून की कुछ महत्वपूर्ण तिथियाँ

8 अप्रैल (1857)

1857 के स्वाधीनता संग्राम के प्रथम विद्रोही मंगल पाण्डे को ब्रिटिश हुकूमत द्वारा फाँसी

8 अप्रैल (1929)

'बहरों को सुनाने के लिए धमाके की जरूरत होती है', इस उद्‌घोष के साथ भगतसिंह और बटुकेश्वर दत्त ने दिल्ली की सेंट्रल असेम्बली में बम फेंका

9 अप्रैल (1893)

महापण्डित राहुल सांकृत्यायन का जन्मदिवस

13 अप्रैल (1919)

जालिम रौलट एक्ट के विरोध में अमृतसर के जालियाँवाला बाग में शान्तिपूर्ण सभा कर रहे लोगों पर ब्रिटिश फौज के जनरल डायर ने अंधाधुंध गोलियाँ चलवाईं जिससे सैकड़ों स्त्री-पुरुष व बच्चे मारे गये। इस दिन को जगह-जगह दमन विरोधी दिवस के रूप में मनाया जाता है।

14 अप्रैल (1963)

महापण्डित राहुल सांकृत्यायन की पुण्यतिथि

18 अप्रैल

चटगाँव विद्रोह । बंगाल (अब बंगलादेश) के चटगाँव शहर में मास्टर सूर्यसेन के नेतृत्व में तरुण क्रान्तिकारियों के दल ने ब्रिटिश शासन के खिलाफ विद्रोह कर दिया और शस्त्रागार पर कब्जा कर लिया।

22 अप्रैल (1870)

रूसी क्रान्ति के महान नेता व्लादिमीर इलिच लेनिन का जन्मदिवस

1 मई

अन्तरराष्ट्रीय मजदूर दिवस : 8 घण्टे काम के दिन की माँग को लेकर 1886 में शिकागो में शहीद हुए मजदूरों की याद में इस दिन दुनिया भर के श्रमिक अपने हक के लिए लड़ने का संकल्प लेते हैं।

5 मई (1818)

कम्युनिस्ट विचारधारा के संस्थापक महान चिन्तक और क्रान्तिकारी कार्ल मार्क्स का जन्मदिवस

5 मई (1911)

चटगाँव विद्रोह की नायिका-प्रीतिलता वाडेदार का जन्मदिवस

8 मई

गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर का जन्मदिवस

10 मई

अंग्रेज हुक्मरानों के खिलाफ, 1857 में प्रथम स्वतंत्रता संग्राम की शुरुआत।

17 मई

महान गणितज्ञ और चिन्तक बट्रेण्ड रसेल का जन्मदिवस

19 मई

वियतनाम के महान क्रान्तिकारी नेता हो चि मिन्ह का जन्मदिवस

28 मई (1930)

भगतसिंह के वरिष्ठ साथी, हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन एसोसिएशन के नेता भगवतीचरण वोहरा बम का परीक्षण करते समय शहीद हो गये

25 मई

महान बंगला कवि काजी नजरुल इस्लाम का जन्मदिवस

11 जून (1857)

महान देशभक्त क्रान्तिकारी, काकोरी केस के शहीद रामप्रसाद बिस्मिल का जन्मदिवस

अनुराग
बाल पत्रिका

त्रैमासिक, वर्ष 11, अंक 2
अप्रैल-जून 2006

सम्पादक
कमला पाण्डेय

सह सम्पादक
अभिनव सिन्हा

सज्जा
रामबाबू

स्वत्वाधिकारी कमला पाण्डेय के लिए यशकरण लाल द्वारा डी-68, निराला नगर, लखनऊ से प्रकाशित तथा मुद्रक बाबूराव बोरकर द्वारा शान्ति प्रेस, नयागाँव (पश्चिम), लखनऊ से मुद्रित।

सम्पादकीय कार्यालय
डी-68, निरालानगर
लखनऊ-226020

फोन : (0522) 2786782

इस अंक का मूल्य : 10 रुपए
वार्षिक सदस्यता : 48 रुपए
(डाक व्यय सहित)

इस अंक में

सवांद

प्यारे बच्चो,

इस बार 'अनुराग' जब तक तुम लोगों के हाथ तक पहुँचेगी, तुम लोग गर्मी की छुट्टियों के मजे ले रहे होगे। ऐसे में 'अनुराग' तुम लोगों के मजे को तो थोड़ा बढ़ा ही देगा। तुम लोगों के साथ इस मजे में तुम्हारी नानी को भी शामिल होने का बड़ा मन हो रहा है। अब तुम ही बताओ अपने मन की इस चाहत को मैं कैसे पूरा करूँ। मुझे तो बस एक ही रास्ता समझ में आ रहा है कि तुम लोग झटपट कलम और कागज उठाओ और सारी मजेदार बातें लिखकर मुझे भेज दो–तुम लोगों ने क्या-क्या शरारतें की, किसे-किसे तंग किया, कितने दोस्त बनाये, कहाँ-कहाँ घूमे, आपस में कितने झगड़े किये और फिर दोस्त बन गये, शरारतों और गलतियों के लिए कितनी डाँट पड़ी (और कितनी पिटाई हुई, इसे भी चुपके से बता देना), कौन-कौन सी फिल्में देखी, ड्राइंग में क्या-क्या बनाया? और भी वो सारी बातें, जो तुमने की, सब लिखना। तुम्हारी नानी ने तुम्हारे मजेदार खतों का अभी से इन्तज़ार करना शुरू कर दिया है। तुमने जो सपने देखे, उसे भी जरूर लिखना। तुम्हारी इस नानी को सपने देखना, बच्चों के सपने सुनना और उस सपने को जमीन पर उतारने के सपने देखना और इसके लिए काम करना बहुत अच्छा लगता है। मैं जानती हूँ तुम्हें भी ऐसा करना अच्छा लगता है। तो आज से मैं तुम्हारे एक से एक मजेदार पत्रों के सपने देखूँगी।

प्यार सहित

तुम्हारी नानी,

कमला पाण्डेय

पोस्ट बॉक्स

आदरणीय नानी जी,

सादर प्रणाम,

अनुराग में मेरे पत्र को स्थान देने के लिए धन्यवाद। इस बार अपनी एक और कविता "सेमल के फूलों से" आपको अनुराग में छपने के लिए भेज रहा हूँ। कृपया इसे अनुराग में स्थान देने का प्रयत्न करें। एक बात और कहना चाहूँगा कि अब अनुराग को थोड़ा विस्तृत करने की अर्थात इसकी पृष्ठ संख्या बढ़ाने की ज़रूरत है। इससे एक तो पत्रिका की लोकप्रियता बढ़ेगी, दूसरे इससे हिन्दुस्तान एवं विश्व के अन्य जनवादी लेखकों (गोर्की, चेखव, शोलोखोव, प्रेमचन्द, गैदार, लू-शुन) इत्यादि की रचनाएँ भी पत्रिका में दी जा सकेंगी, जिससे इसकी पहुँच मुझ जैसे अन्य किशोर पाठकों के बीच भी बनेगी। एक बात और पत्रिका को त्रैमासिक की जगह मासिक करने का भी प्रयत्न करें।

–आपका विप्लव

आदरणीया सम्पादक जी,

सादर नमन,

बाल साहित्य की पत्रिका 'अनुराग' का माह जनवरी-मार्च'06 अंक मिला। प्रसन्नता हुई। पत्रिका के अंकों में उत्तरोत्तर निखार आ रहा है। कृपया हार्दिक शुभकामनाएँ स्वीकार करें।

अनिल द्विवेदी "तपन"

ककड़ी की कीमत

—आचार्य चतुरसेन

यह दिल्ली के बीते हुए दिनों के एक रईस की इज्ज़त की हृदयग्राही कहानी है।
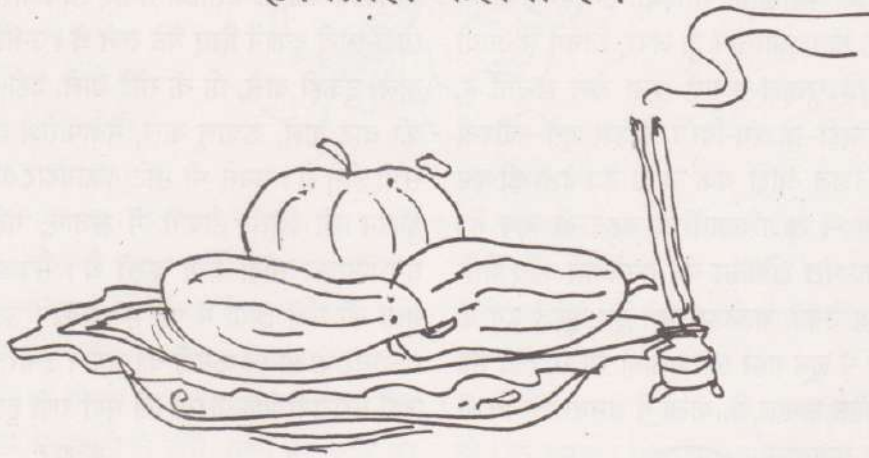
आज तो दिल्ली का सब रंग-ढंग ही बिगड़ गया है। बाज़ार में, मकानों में, चाल-ढाल में, सड़कों में, सबमें विलायतीपन आ गया है। जब से दिल्ली भारत की राजधानी बनी है और नई दिल्ली की चकाचौंध को मात करने वाली विचित्र नगरी बसी है, तब से दिल्ली यद्यपि पंजाब से पृथक् अलग सूबा बन गया है, फिर भी उसमें बुरी तरह से पंजाबीपन भर गया है। नई दिल्ली जब बस रही थी। तब ढेर के ढेर पंजाबी सिक्ख और सभी उत्साही लोग—जिन्होंने पंजाब के गेहूँ और उर्द एवं चने खाकर अपने शरीरबल को खूब वृद्धि दी है—नई दिल्ली पर चढ़ दौड़े। ठेकेदार से लेकर साधारण मज़दूर तक साहसी पुरुष भर गए। उन्होंने नई दिल्ली में प्रारम्भ में कौड़ियों के मोल ज़मीन ली और बस गए। अब नई दिल्ली में वे सरदारजी होकर मोटर में दौड़ते हैं; वीरभोग्या वसुन्धरा। दिल्ली के महीन आदमी न जाने कहाँ खो गए। अब जगह-जगह होटल खुल गए हैं। लाइन-की-लाइन खालसा होटलों की दुकानें आप दिल्ली के बाज़ारों में देख सकंते हैं, जहाँ झटका पकने का साइनबोर्ड लगा होगा। और वहाँ अनगिनत सरदारगण बड़े-बड़े साफे बाँधे, लम्बी दाढ़ी फटकारे, कोट-पैंट, बूट डाटे, खाट या टेबुल पर बैठे रोटियाँ खाते दीख पड़ते हैं। छुआछूत को तो इन्होंने डण्डे मारकर दिल्ली में नज़ाकत के साथ दूर ही कर दिया है। शाम को आप जरा चाँदनी चौक में एक चक्कर लगाइए। पंजाबी युवतियाँ और प्रौढ़ाएँ बारीक दुपट्टा माथे पर डाले,

सलवार डाटे, मुँह खोले बेफिक्री से कचालू वाले के इर्द-गिर्द बैठकर कचालू-आलू खाती नजर आएँगी।

कभी-कभी ब्याह-शादी के जलूसों में जौहरियों की वह देहलवी नुक्केदार पगड़ियाँ कुछ पुराने सिरों पर नज़र आ जाती थीं, परन्तु वह नीमास्तीन अंगरखे, वसली के जूते, दुपल्ली दो माशे की टोपी, बगल में महीन शर्बती का दुपट्टा तो बिल्कुल हवा हो गए हैं। सरदे के दामन और सफेद शर्बती की चादरें लपेटे अब दिल्ली की ललनाएँ नहीं दीख पड़तीं। न अब वे जड़ाऊ जेवर ही उनके बदन पर दीख पड़ते हैं जिनकी बदौलत दो हज़ार जड़िए और पाँच हजार सुनार दिल्ली से अपनी रोजी चलाते थे। अब तो बारीक क्रेप की फैशनेबिल साड़ियाँ, उन पर नफासत से कढ़ी हुई बेलें, बिना आस्तीन के जंपर, जिनमें से आधी छाती और समूची मृणाल-भुजाएँ खुला खेल खेलती हैं, साथ में ऊँची एड़ी के रंग-बिरंगे सेंडिल-जूते—चाँदनी चौक में देखते-देखते आँखें थक जाती हैं। देश की इन पर्दाफाश बहिनों में सुशिक्षिताएँ तो बहुत ही कम हैं। ज्यादातर मोर का पंख खोंसकर मोर बननेवाले कौए जैसी हैं। इसका पता उनके चहरे पर पुते हुए फूहड़ ढंग के पाउडर से, होंठों में खूब गहरे लगे गुलाबी रंग से, तीव्र सेंट से तराबोर चटकीले रूमाल से, बालों में चमचमाते नकली जड़ाऊ पिनों से अनायास ही लग जाता है। कभी-कभी तो इन अधकचरी मेम-साहिबा की कोमल कलाइयों में दिल्ली फैशन के सोने के दस्तबन्दों और अनगिनत चूड़ियों के बीच फैन्सी रिस्टवाच तथा पैरों के जेवरों पर एड़ी का सैण्डिल शू मन में अजब हास्य उत्पन्न करता है, खासकर उस हालत में जब कि उनके पालतू पति महाशय पतलून पर लापरवाही से स्वेटर और कोट डाले उनके पीछे-पीछे उनकी खरीदी चीजों का बंडल लिए बड़े उल्लास से चलते-फिरते और मुसाहिबी करते नज़र आते हैं।

38 वर्ष हुए। उस समय दिल्ली के चाँदनी चौक में अब जहाँ अगल-बगल चलने वालों के लिए पटरियाँ बनी हैं। वहाँ सड़कें थीं। सड़कें कंकड़ की थीं। उनमें बहली, मझोलियाँ, इक्के सरपट दौड़ा करते थे। दोनों समय उन सड़कों पर छिड़काव हुआ करता था। बीचों-बीच अब जहाँ चमचमाती सीमेण्ट की पुख्ता सड़क है, वहाँ नहर पर पटरी बनी थी। उसके दोनों ओर खूब घने वृक्षों की छाया थी। ज्येष्ठ-वैशाख की दोपहरी में भी वहाँ शीतल वायु के झोंके आया करते थे। उस पटरी पर बड़ी-बड़ी भीमकाय बेंतों की छतरियाँ लगाए खोंचे वाले अपनी-अपनी छोटी-छोटी दुकानें लिए बैठे रहते थे। उनमें बिसाती टोपी वाले, टुकड़ी वाले, घी के सौदे वाले, दही-बड़े वाले, चने की चाट वाले, कचालू वाले, मेवाफरोश तथा फल वाले सभी होते थे। उनसे भी छोटे दुकानदार अपनी छोटी-सी दुकान को किसी टोकरी में सजाए, गले में लटकाए घूम-फिरकर सौदा बेचा करते थे। सैकड़ों आदमी उन वृक्षों की घनी छाया में पड़े हुए थकान उतारा करते थे। घण्टाघर के सामने कमेटी की संगीन इमारत के आगे अब जहाँ महारानी विक्टोरिया की मूर्ति रखी हुई है, वहाँ काले पत्थर का एक विशालकाय हाथी खड़ा था, जिसे जयमल फत्ते का हाथी कहकर बूढ़े आदमी उस पटरी पर वृक्षों की ठण्डी छाया में लेटे उनींदी आँखों में खमीरी तंमाखू का मद भरे भाँति-भाँति के किस्से-कहानी कहा करते थे। दिल्ली के निवासियों की बोली में एक अजीब लोच था। खोंचेवालों की आवाजें भी एक-से-एक बढ़कर होती थीं। सब्जी-तरकारियों में जो पहले चलती, वही

दिल्ली के रईस खाते थे। भिण्डी और करेले जब तक रुपये सेर बिकते थे, कच्ची आम की कैरियाँ जब तक बारह आने सेर बिकती थीं, तभी तक वे दिल्लीवालों के खाने की चीज समझी जाती थीं। सस्ती होने पर उन्हें कोई नहीं पूछता था। बेर के मौसम में लोग बेरों को चाकू से छीलकर उन पर चाँदी का वर्क लपेटकर खाते थे। लताफत और नज़ाकत हर-एक बात में थी। जैसे वे महीन आदमी थे, वैसे ही उनका रहन-सहन भी था।

फागुन लग गया था। वसन्त पुज चुका था। सर्दी कम हो गई थी। वासन्ती हवा मन को हरा कर रही थी। बाज़ार में नर्म-नर्म पतली ककड़ियों के कूजे बिकने आने लगे थे। पर उनके दाम काफी महंगे थे इसलिए यह रईसों का ककड़ी खाने का मौसम था। एक जवान कुंजड़ा सिर पर नारंगी साफा बेपरवाही से बाँधे, बदन पर तंजेब का ढीला कुर्ता पहने, गले में सोने की छोटी-सी तावीज काले डोरे में लटकाए, आँखों में सुरमा और मुँह में पानों की गिलौरियाँ दबाए कमर में चौखाने का तहमत और पैर में फूलदार सलेमशाही आधी छटांक का जूता पहने ककड़ियाँ बेचता पटरी पर मस्तानी अदा से घूम रहा था। उसके हाथ में झाऊँ की एक सूफियानी चौड़ी टोकरी थी। उस पर केले के हरे पत्तों पर गुलाब के फूलों के बीच ककड़ी के दो रवे रखे थे। टोकरी उसके दाहिने हाथ में अधर धरी थी। वह अपनी मस्त आँखों से इधर-उधर घूरता झूमती-झूमती ललकती भाषा में आवाज लगाता था—नाजुक ये ककड़ियाँ ले लो... लैला की उँगलियाँ ले लो... मजनूँ की पसलियाँ ले लो। नाजुक ये ककड़ियाँ ले लो।

पीछे से आवाज आई—ककड़ी वाले, जरा वरे को आना। उसी भाँति मस्तानी अदा से पुकारता हुआ ककड़ीवाला पीछे को फिरा। पुकारनेवाला कहार था। वह एक बुड्ढा आदमी था। उसकी सफेद-सफेद बड़ी मूँछें, पक्का रंग, लट्ठे की मिर्जई, दुप्पली टोपी और चौखाने का अंगोछा कन्धे पर पड़ा हुआ था।

ककड़ियों को देखकर उसने कहा—सिर्फ दो ही रवे हैं?

"अभी ककड़ियाँ कहाँ? वह तो कहो, मैं चार रवे लाया था। दो बिक गए, दो ये हैं। लेना हो तो लो, मोलभाव का काम नहीं, चवन्नी लूँगा।"

बूढ़ा कहार अभी नहीं बोला था। एक युवक ने तीव्र आवाज़ में कहा—अठन्नी ले लो जी, ककड़ियाँ हमें दो।

पहलवान युवक भी कहार था। उसकी मसें अभी भीगी थीं। भुजदण्डों में मछलियाँ उभर रही थीं। उसने हेरती हुई आँखों से बूढ़े कहार की ओर देखा और अठन्नी टन से झाबे में फेंक दी।

"सौदा हमसे हुआ है जी, ककड़ियाँ हम लेंगे। यह लो एक रुपया। ककड़ियाँ हमें दो।"

कुंजड़ा क्षण-भर स्तम्भित रहा। उसने प्रश्नवाचक दृष्टि से युवक की ओर देखा। युवक ने कहा—कुछ परवाह नहीं, हम दो रुपये देंगे।

"हम पाँच रुपये देते हैं।"

"हम दस देते हैं।"

"यह लो बीस रुपये। ककड़ी तो हम खरीद चुके।"

"पच्चीस हैं ये, ककड़ी हमने ले लीं।"

"हमने तीस दिए।"

युवक के माथे पर बल पड़ गए। उसने कहा—हम पचास में खरीदते हैं। लाओ ककड़ियाँ इधर दो।

बूढ़े कहार ने हँस दिया और अवज्ञा की दृष्टि से युवक की ओर देखकर ज़रा सीधा खड़ा होकर उसने तेज़ स्वर में कहा—मैंने सौ रुपये में दोनों ककड़ियाँ खरीद लीं।

युवक कहार क्षणभर घबराई दृष्टि से बूढ़े की ओर देखता रहा। बूढ़े ने विजयगर्वित दृष्टि से उसे घूरते हुए

कहा—दम हो तो बढ़ो आगे। ककड़ियाँ पाँच हज़ार तक मेरे यहाँ जाएँगी।

सैकड़ों आदमी इकट्ठे हो गए थे। युवक लज्जा और क्रोध से भरकर चुपचाप चल दिया। सैकड़ों कण्ठों से नारा बुलन्द हुआ—वाह भई, महरा, क्यों न हो? आखिर तू है किस घराने का नौकर, जो इस समय दिल्ली की नाक है। शाबाश!

बूढ़े ने कमर से रुपये खोलकर गिन दिए। ककड़ियाँ लीं और इस भाँति अपने मालिक के घर को चला, जैसे वह एक राज्य विजय कर लाया हो।

बूढ़े ने अपने मालिक लाला जगतनारायणजी के सामने जाकर फूलों और केले के पत्तों में लिपटी हुई ककड़ियाँ रख दीं। शाम हो चली थी।

लालाजी ने पूछा—क्या दो ही मिलीं?

"जी हाँ, बाजार भर में दो ही ककड़ियाँ थीं जिन्हें आपका सेवक सौ रुपये में खरीद लाया है।"

इसके बाद कहार ने जो घटना बाज़ार में घटी थी, सब कह सुनाई। लाला ने सब सुना। क्षणभर वे स्तम्भित रहे। क्षणभर बाद उन्होंने अपने गले से सोने का तोड़ा उतारकर बूढ़े के गले में डाल दिया और उसके बदन को दुशाले से लपेटकर स्वयं भी उससे लिपट गए। उनकी आँखों से आँसुओं की धारा बह निकली। उन्होंने गद्‌गद् कण्ठ से कहा—शाबाश मेरे प्यारे रामदीन, तुमने बाज़ार में मेरी प्रतिष्ठा बचा ली। इसके बाद उन्होंने चाँदी की तश्तरी में ककड़ियों को उन्हीं गुलाब के फूलों में रखकर ऊपर कमख्वाब का रूमाल ढाँककर कहा—जाओ, लाला शिवप्रसाद जी से मेरा जयगोपाल कहना, और कहना कि आपके सेवक ने यह प्रेम की सौगात भेजी है और हाथ जोड़कर अर्ज की है कि स्वीकर करके इज्ज़त अफ़ज़ाई करें।

युवक से सब घटना सुनकर शिवप्रसादजी चुपचाप मसनद पर लुढ़क गए। मुँह की गिलौरी उन्होंने थूक दी। नौकर-चाकर चिन्तित हुए। पर कोई कुछ कह नहीं सकता था। थोड़ी ही देर में बूढ़े रामदीन ने आकर अदब से आगे बढ़कर तश्तरी लाला शिवप्रसादजी के सामने रख दी और हाथ जोड़कर अपने मालिक का संदेश भी निवेदन कर दिया। लाला शिवप्रसादजी चुपचाप एकटक तश्तरी में रखी दोनों ककड़ियों को देखते रहे। कुछ देर बाद उन्होंने ककड़ियाँ भीतर भिजवा दीं और तश्तरी अशर्फियों से भरकर कहा—यह तुम्हारा इनाम है। लाला जगतनारायणजी से हमारा जयगोपाल कहना।

बूढ़े रामदीन ने झुककर सलाम किया और चला आया।

दूसरे दिन सूर्योदय के साथ ही सारे शहर में खबर फैल गई कि नगर के प्रसिद्ध रईस लाला शिवप्रसादजी ने ज़हर खाकर जान दे दी। वे एक पुर्जे पर यह लिखकर रख गए कि बाज़ार में मेरी इज्ज़त किरकिरी हो गई। अब मैं दुनिया में मुँह नहीं दिखा सकता।

ऊपर जिन दो प्रतिष्ठित रईसों के नाम दिए गए हैं। वे काल्पनिक हैं। आज भी ये दोनों घराने दिल्ली में उसी भाँति प्रतिष्ठित हैं। हाँ, जिनका नाम जगतनारायण कल्पित दिया गया है, उनके घर से लक्ष्मी रूठ गई है। आज वह विशाल हवेली टूट-फूटकर खण्डहर हो गई है। उसमें जो एकाध कमरा बचा है उसमें उनके उत्तराधिकारी बड़े कष्ट से काल-यापन करते हैं। नीचे के खण्ड के खण्डहरों में छोटे दर्जे के किराएदार रहते हैं, जिनकी आमदनी पर ही उनका निर्वाह निर्भर है। •

नन्हे गुदड़ीलाल के साहसिक कारनामे

सुन यओच्युन

किसी समय फिङफिङ नाम की एक छोटी-सी लड़की के पास कपड़े का एक नन्हा गुड्डा था, जिसका नाम था गुदड़ीलाल। कैसा अजीब-सा नाम था यह! बच्चो, क्या तुम जानना चाहते हो कि इस गुड्डे का यह अजीब-सा नाम कैसे पड़ गया? इस सवाल का जवाब तुम्हें इस लम्बी कहानी में मिलेगा।

एक समय की बात है। एक दिन नन्हा गुदड़ीलाल...।

"नन्हा गुदड़ीलाल? यह नन्हा गुदड़ीलाल आखिर कौन था?"

गुदड़ीलाल कपड़े का एक नन्हा-सा गुड्डा था। आज मैं तुम्हें उसी गुदड़ीलाल के बारे में कुछ कहानियाँ सुनाने जा रहा हूँ, उसके दिलचस्प कारनामों का परिचय देने जा रहा हूँ। कपड़े का वह नन्हा-सा गुड्डा...।

"पर उसका असली नाम क्या था?"

उसका असली नाम भी गुदड़ीलाल ही था। कपड़े का वह नन्हा सा गुड्डा...।

"बड़ा अजीब-सा नाम है इस गुड्डे का! इसका नाम हम सब बच्चों की तरह क्यों नहीं है?"

क्योंकि... लेकिन बच्चो! अगर तुम बीच-बीच में मुझे इस तरह टोकते रहोगे, तो कहानी का सारा मजा किरकिरा हो जायेगा। पहले मुझे पूरी कहानी सुनाने दो। तुम लोग चुपचाप सुनते रहो। शुरू से अन्त तक पूरी कहानी मैं तुम्हें सिलसिलेवार सुनाता हूँ। अगर कोई बात समझ में न आए, तो बाद में पूछ सकते हो। बोलो, क्या तुम्हें मेरी यह शर्त मंजूर है? अगर मंजूर है, तो मैं तुम्हें कहानी सुनाना शुरू करता हूँ।

1. नये साल के तोहफे

नया साल आने ही वाला था। शिशुशाला में भारी चहलपहल थी। सब लोग व्यस्त थे। बच्चे नाच-गाने और नाटक का अभ्यास कर रहे थे। नाटक का नाम था : "नन्हे सफेद खरगोश ने गेहूँ बोया"। यह प्रोग्राम नए साल की पूर्वसंध्या के मौके पर पेश किया जाने वाला था। बच्चों के माता-पिता, दादा-दादी सभी को निमंत्रण दिया गया था। शिशुशाला की मौसियाँ प्रोग्राम के लिए तरह-तरह की पोशाकें सिलने में व्यस्त थीं; रसोइए अच्छे-अच्छे पकवान बना रहे थे। अध्यापिकाएँ सबसे ज्यादा व्यस्त थीं। वे बच्चों के लिए नए साल के तोहफे तैयार कर रही थीं। वे बच्चों को नाच-गाने भी सिखा रही थीं।

जब ढेर सारे तोहफे तैयारे हो गए, तो उन्हें मेज पर रख दिया गया और एक बड़े-से लाल कागज से ढक दिया गया। कागज पर लिखा था :

नये साल के तोहफे

क्या तुम लोग बता सकते हो कि उस लाल कागज के नीचे क्या-क्या तोहफे थे। इसके बारे में बच्चों को कोई जानकारी नहीं थी। अध्यापिकाएँ उन्हें मेज के पास नहीं जाने दे रही थीं। लाल कागज को नए साल के दिन ही हटाया जाना था। उसे हटाने के बाद बच्चों को

कितनी खुशी होगी! सचमुच कितना मजा आएगा!

कागज के नीचे आखिर क्या रखा है, यह मैं अच्छी तरह जानता था। जब मैं स्कूल गया था, तो कागज के नीचे झाँककर देख चुका था। क्या तुम बता सकते हो कि मैंने मेज पर क्या देखा था? जरा ठहरो, अगर नहीं बता सकते तो मैं ही तुम्हें बता देता हूँ।

कागज के नीचे बहुत से खिलौने रखे हुए थे!

हाँ, ढेर सारे खिलौने! मेज पर एक काला भालू था, एक जिराफ था, एक मोटा-सा नन्हा सुअर था। उनकी बगल में एक बन्दर था और एक गुड़िया थी। इनके अलावा मोटरकार, रेलगाड़ी, ट्रैक्टर और हवाईजहाज भी रखे हुए थे। सभी खिलौने बड़े सुन्दर थे और देखने में असली जान पड़ते थे। मजे की बात यह थी कि ये सभी खिलौने कपड़े की बचीखुची कतरनों से बनाए गए थे। मोटरकार और हवाईजहाज तो ऐसे लग रहे थे मानो चलने को तैयार हों।

आज नए साल की पूर्वसंध्या थी। फिर नया साल आएगा। उस दिन बच्चों को उपहार मिलेंगे।

"कल नया साल है," एक अध्यापिका ने कहा। "अब तक हम आखिर कितने खिलौने बना चुके हैं? गिनकर देख लें, तो अच्छा होगा।"

अध्यापिका का नाम था श्याओ। वह उम्र में बाकी सब अध्यापिकाओं से छोटी थी। इसलिए उसका नाम अध्यापिका श्याओ पड़ गया था। अगर तुम छः साल के तीन बच्चों की उम्र को जोड़ दो, तो उसका योग अध्यापिका श्याओ की उम्र से एक वर्ष ज्यादा हो जाएगा। क्या तुम बता सकते हो कि उसकी उम्र कितनी थी? बिल्कुल ठीक! वह सत्रह वर्ष की थी।

अध्यापिका श्याओ खिलौने गिनने लगी : "एक, दो, तीन, चार..." जब वह पूरे खिलौने गिन चुकी, तो खुशी से तालियाँ बजाने लगी। उसकी दोनों चोटियाँ कन्धों पर झूलने लगीं।

"निन्यानबे," वह बोली। "एक खिलौना कम कैसे रह गया है?"

"कौन कहता है कि एक खिलौना कम है?" चश्मे वाली अध्यापिका बोल पड़ी। उसका नाम श्वी था। "तुम्हें क्या हो गया है? क्या तुम नहीं जानती कि हमारी शिशुशाला में सौ बच्चे हैं?" अध्यापिका ने कहा।

"तुम्हारी बात बिल्कुल सही है!" अध्यापिका ने मुस्कराते हुए कहा। "लेकिन किताबों के शेल्फ में एक नन्हा कुत्ता भी तो पड़ा है। खेलते समय बच्चों से उसकी सिलाई कुछ खुल गई है। एक-दो टाँके लगाकर ठीक हो जाएगा।"

"ठीक है," अध्यापिका श्याओ बोली। "नन्हे कुत्ते का तो मुझे ख्याल ही नहीं रहा।"

"तो काम पूरा हो गया है," अन्य अध्यापिकाएँ बोलीं। "निन्यानबे खिलौने तो हम लोग बना ही चुके हैं। इस कुत्ते को मिलाकर सौ हो जाएँगे।"

सभी अध्यापिकाएँ शाम का भोजन करने घर चली गईं। खाना खाने के बाद उन्हें फिर स्कूल लौटना था। आज नए साल की पूर्वसंध्या थी। इसलिए वे सबसे ज्यादा व्यस्त थीं। शाम का भोजन करने के बाद बच्चे अपने माता-पिता, दादा-दादी के साथ नए साल के समारोह में शामिल होने आने वाले थे। इस मौके पर नाटक भी खेला जाने वाला था। अध्यापिकाओं की तैयारी का बहुत सा काम अभी बाकी था। उन्हें बच्चों के माता-पिता, दादा-दादी के स्वागत-सत्कार का प्रबन्ध करना था, उनके लिए चायपानी का प्रबन्ध करना था, बच्चों को केक और फल बाँटने की व्यवस्था करनी थी।

अध्यापिका श्वी ने अध्यापिका श्याओ से घर चलने को कहा। लेकिन अध्यापिका श्याओ अभी घर नहीं लौटना चाहती थी। वह अब भी खिलौनों के बारे में सोच रही थी। "इसमें शक नहीं कि नन्हे कुत्ते को एक-दो टाँके लगाकर ठीक किया जा सकता है," उसने मन ही मन सोचा। "फिर भी यह एक पुराना ही खिलौना तो है। बच्चे इससे काफी खेल चुके हैं। जिस किसी बच्चे को यह मिलेगा, वह उदास हो जाएगा। अगर सौ बच्चों में से एक भी बच्चा उदास हो गया, तो कितनी बुरी बात होगी! जैसे भी हो, मुझे एक नया खिलौना जरूर बना लेना चाहिए, जिससे सब बच्चे खुश हो जाएँ।"

अध्यापिका श्याओ ने कपड़े की कतरनों के लिए शिशुशाला का कोना-कोना छान मारा। पर कहीं एक भी

कतरन नजर नहीं आई। उसने सभी अलमारियों के दराज उलट-पुलट कर देख लिए और सभी शेल्फों को टटोल डाला। पर कहीं कुछ नहीं मिला।

बाहर हल्की-हल्की बरफ पड़ रही थी और ठण्ड बहुत तेज थी। अध्यापिका श्याओ परेशान हो गई।

काफी खोजबीन के बाद उसे हरे और गुलाबी रंग के दो छोटे-छोटे कपड़े के टुकड़े मिल गए। हरा टुकड़ा गुड़िया की स्कर्ट से बचा था और गुलाबी कतरन एक बड़ी गुड़िया का मुँह बनाते समय बच गई थी।

''हे भगवान!'' अध्यापिका श्याओ ने ठण्डी साँस भरते हुए कहा। ''अब क्या होगा? मैंने इतनी बड़ी गुड़िया आखिर क्यों बनाई? अब मेरे पास एक गुड्डा बनाने के लिए भी कपड़ा नहीं बचा।''

परेशान होकर वह थोड़ी देर के लिए कुर्सी पर बैठ गई। फिर बोली : ''ठीक है, मैं कपड़े का एक नन्हा-सा गुड्डा बनाती हूँ। हालाँकि वह बहुत छोटा होगा, फिर भी मैं उसे बड़ी सावधानी से बनाऊँगी। वह बड़ा सुन्दर होगा और जिसे भी मिलेगा, वह खुशी से नाच उठेगा!''

उसने गुड्डे का मुँह और बदन गुलाबी रंग के कपड़े से और जाकिट हरे रंग के कपड़े से बनाने की सोची। पर उसका पाजामा किस कपड़े से बनाया जाएगा?

वह कमरे में चक्कर लगाने लगी। उसके माथे पर बल पड़ गए। अलमारी पर लगे आदमकद आईने के सामने खड़ी होकर वह अपने प्रतिबिम्ब से पूछने लगी : ''अब क्या होगा?'' प्रतिबिम्ब भी उससे वही सवाल पूछने लगा : ''अब क्या होगा?''

आईने के सामने खड़ी होकर अध्यापिका श्याओ ने अपनी दोनों चोटियाँ आगे कर लीं और दिमाग पर जोर डालने लगी।

''रास्ता निकल आया!'' वह मुस्कराकर बोली। उसकी नजर चोटियों पर लगे सफेद रिबनों पर पड़ चुकी थी, जिन्हें वह नए साल के लिए विशेष रूप से लाई थी। वे बिल्कुल नए थे।

''यह मुझे पहले क्यों नहीं सूझा?'' अध्यापिका श्याओ ने अपनी दोनों चोटियों से रिबन खोल लिए। ''सफेद रिबन पाजामा बनाने के लिए बिल्कुल ठीक रहेगा।''

वह कुर्सी पर बैठ गई और कागज पर एक नन्हे गुड्डे का चित्र बनाने लगी। गुड्डे का सिर बड़ा, चेहरा गोलमटोल और कद बहुत छोटा था। सिर पर सामने की तरफ बालों का एक गुच्छा था। हरी जाकिट और सफेद पाजामे में वह सचमुच बड़ा सुन्दर लग रहा था!

अध्यापिका श्याओ ने यह चित्र केवल डिजाइन के तौर पर बनाया था। अब वह गुड्डा बनाने लगी। सबसे पहले उसने गुलाबी रंग के कपड़े से थैलीनुमा एक चीज बनाई। पर वास्तव में वह थैली नहीं थी। इस थैलीनुमा चीज में रूई भरते ही वह नन्हे गुड्डे में बदल सकती थी। पर रूई कहाँ से आए?यह एक नई समस्या थी। अध्यापिका श्याओ फिर सोच में पड़ गई। पर ज्योंही उसकी नज़र अपने रूईदार कोट पर पड़ी, वह मुस्कराने लगी। कोट का एक सिरा सुई से खोलकर उसने धीरे से कुछ रूई निकाल ली और उसे बड़ी सावधानी से थैलीनुमा चीज में भर दिया। रूई भरते ही वह कपड़े के एक प्यारे-से नन्हे गुड्डे जैसी दिखाई देने लगी। लेकिन उसे कपड़े पहनाना और उसका चेहरा-मोहरा बनाना अभी बाकी था।

अध्यापिका श्याओ गुड्डे के कपड़े सिलने लगी। जल्दी ही उसने गुड्डे को हरी जाकिट और सफेद पाजामा पहना दिया। फिर उसके सिर पर काले तागे से कुछ बाल लगाकर उन्हें अच्छी तरह काटछाँट दिया, ताकि वे असली

बाल लगें।

अब गुड्डे की आँख, भौहें, नाक और मुँह बनाना बाकी रह गया था। उसने कलम उठाई और सावधानी से ये सब चीजें बनाने लगी। वह काम में इतनी डूब गई कि शाम का भोजन करना और अपनी जाकिट का कोना सिलना भी भूल गई। उसे यह भी पता नहीं चला कि शाम हो चुकी है और बाहर तेज बरफ पड़ रही है।...

गुड्डे की काली आँखें देखने में बड़ी सुन्दर लग रही थीं। वे हूबहू असली आँखों जैसी लग रही थीं। लगता था, जैसे गुड्डा बोल रहा हो : "शुक्रिया दीदी, इतनी अच्छी आँखें बनाने के लिए बहुत-बहुत शुक्रिया!"

पूरा काम खत्म होने के बाद उसने कलम नीचे रख दी। फिर एक लम्बी साँस भरकर बोली : "तुम कितने प्यारे गुड्डे हो! तुम सचमुच कितने सुन्दर लग रहे हो!"

वह खुश होकर तालियाँ बजाने लगी। फिर गुड्डे को हाथ में उठाकर उसकी तरफ देखती हुई बोली : "अब मैं तुम्हारे लिए एक छोटी-सी टोपी बना देती हूँ। बाहर बहुत ठण्ड पड़ रही है। कल तुम्हें कोई बच्चा अपने घर ले जाएगा। टोपी पहन लोगे, तो जुकाम नहीं होगा।"

अध्यापिका श्याओ ने बड़ी गुड़िया की जेब से एक छोटा-सा पीला रूमाल निकाल लिया। कुछ ही देर में एक छोटी-सी नुकीली टोपी बनकर तैयार हो गई। यह टोपी उसने कपड़े के गुड्डे को पहना दी। टोपी से उसका पूरा सिर ढक गया। सिर्फ कुछ बाल अब भी माथे पर दिखाई दे रहे थे।

अध्यापिका श्याओ ने गुड्डे को उठाकर चूम लिया। "अब तुम पहले से कहीं ज्यादा सुन्दर लग रहे हो, और शैतान भी!"

बाहर से आवाजें आने लगीं। बच्चे शाम का खाना खाने के बाद अपने माता-पिता, दादा-दादी के साथ प्रोग्राम देखने आने लगे थे। कुछ लोग जूतों पर पड़ी बर्फ झाड़ रहे थे, तो कुछ लोग कपड़ों पर पड़ी बर्फ हटा रहे थे।

"मैं तुम्हें सबसे ज्यादा प्यार करती हूँ!" अध्यापिका श्याओ ने नन्हे गुड्डे से कहा। "यों तो तुम सबसे छोटे हो, पर तुम्हें बनाने में मुझे कितनी मुसीबतें उठानी पड़ीं! कल तुम किसी बच्चे के साथ अपने घर चले जाओगे। वहाँ तुम्हें अच्छी तरह रहना चाहिए और बड़ों का कहना मानना चाहिए। अब मैं तुम्हारा एक अच्छा-सा नाम रखना चाहती हूँ। मैंने तुम्हें कपड़े की छोटी-छोटी कतरनों से बनाया है। इसलिए मैं तुम्हारा नाम "गुदड़ीलाल" रखना चाहती हूँ। आज से तुम्हारा नाम गुदड़ीलाल हो गया है। याद रखना।"

अचानक दरवाजा खुला और एक बच्चा अन्दर आ गया। वह अध्यापिका श्याओ से समारोह में चलने का अनुरोध करने लगा।

"मैं अभी आ रही हूँ," अध्यापिका श्याओ ने मुस्कराते हुए कहा। फिर उसने लाल कागज ऊपर उठाया और कपड़े के नन्हे गुड्डे को बाकी खिलौनों के साथ मेज पर रखकर फुर्ती से कमरे के बाहर चली गई।

रबरमैन

(अफ्रीकी कहानी)

एक मकड़ा था, जो बहुत ही आलसी था। रोज दोपहर 12 बजे सोकर उठता, फिर नाश्ता करता और अपनी पत्नी से कहता, "मैं खेत जा रहा हूँ।"

लेकिन वह खेत नहीं जाता था। उसके पास कोई खेत ही नहीं था। वह जंगल जाता और पूरे दिन एक बड़े पेड़ के नीचे बैठा रहता।

कभी-कभी उसकी पत्नी उससे कहती :

"खेत में जब कभी मेरी मदद की ज़रूरत हो तो बताना।"

वह ज्यादा कुछ नहीं कहती, क्योंकि वह उसे नाराज़ नहीं करना चाहती थी।

मकड़ा जवाब देता : "अरे, अभी तो बहुत समय है। तुम चिन्ता मत करो, जब मुझे तुम्हारी ज़रूरत होगी, मैं तुमसे कह दूँगा।"

अक्सर लोग उससे पूछते : "तुम अपने खेत में काम कब शुरू करोगे?" और वह जवाब देता, "अभी बहुत समय है।" फिर एक दिन उसने अपनी पत्नी से कहा : "कल मैं खेत में मूँगफली के कुछ पौधे लगाना चाहता हूँ। तुम बाज़ार जाओ और एक बैग मूँगफली ले आओ। कल मेरे पास वह ज़रूर होना चाहिए।"

उसकी पत्नी यह सुनकर बहुत खुश हुई और मूँगफली खरीदने के लिये बाज़ार की ओर दौड़ी। अगले दिन मकड़ा मूँगफली लेकर जंगल गया और जितना चाहा, जी भर खाया फिर बड़े पेड़ के नीचे आराम से सो गया। शाम को घर आया और अपनी पत्नी से कहने लगा :

"ओह, मैं कितना भूखा और थका हुआ हूँ। मैं पूरे दिन खेत में काम करता रहा हूँ। क्या नाश्ता तैयार है? हम पुरुषों की ज़िन्दगी बहुत कठिन है। हम सुबह से लेकर रात तक काम करते हैं और तुम औरतें, तुम्हें केवल नाश्ता और खाना बनाना होता है।"

हर दिन मकड़ा बाहर जाता लेकिन खेत में काम करने नहीं बल्कि जंगल में मूँगफली खाता और आराम करता।

समय बीतता गया, और लोग अपने घर खेत से मूँगफली लाने लगे, लेकिन मकड़ा कुछ नहीं लाता था। फिर उसकी पत्नी ने कहा :

"तुम मूँगफली घर कब लाओगे? क्या मैं तुम्हारी मदद करूँ?"

"नहीं, नहीं, मुझे तुम्हारी मदद की ज़रूरत नहीं है," मकड़ा जवाब देता। "मैं कुछ ही दिन में मूँगफली घर लाऊँगा।"

लेकिन वह मूँगफली घर कैसे लाता? अब तो उसके पास मूँगफली भी नहीं थे! यहाँ तक कि खेत भी नहीं थे!

"मुझे मूँगफली कहाँ से मिल सकता है?" वह खुद से कहता। "आह, समझ गया। मैं थोड़ा मूँगफली चुरा लूँगा," उसने सोचा।

उस रात वह घर के बाहर गया और मुखिया के खेत में पहुँचा। यह बहुत बड़ा खेत था, और वहाँ मूँगफली के खेत में बहुत सारे मूँगफली थे। फिर उसने अपने बैग में

मूँगफली भरे, जंगल में एक पेड़ के नीचे उसे छुपा दिया और वापस घर लौट आया। अगली सुबह उसने अपनी पत्नी से कहा :

"आज मैं खेत से मूँगफली लाऊँगा। तुम बढ़िया नाश्ता बनाओ। मैं बहुत भूखा और थका हुआ हूँ।"

"ज़रूर मेरे प्यारे," पत्नी ने कहा।

मकड़ा जंगल चला गया। पेड़ के नीचे मूँगफली वाला बैग रखा था। मकड़े ने कुछ मूँगफली खाये और सो गया। शाम को वह पत्नी के पास बैग ले गया। वह खुश थी! उसने बैग खोला, एक मूँगफली लिया, उसे खाया, फिर एक और लिया और फिर एक और...। वे बहुत ही अच्छे थे।

अगली रात मकड़ा फिर मुखिया के खेत गया और फिर एक बैग मूँगफली चुरा लिया। जब अगली शाम हुई, वह फिर पत्नी के पास उसे लाया। यही प्रक्रिया वह बार-बार दोहराता रहा। लेकिन एक रात मुखिया के नौकर ने मूँगफली चुराते हुए चोर को देख लिया।

"मैं चोर को ज़रूर पकड़ूँगा, लेकिन ऐसा मैं कैसे कर सकता हूँ?" नौकर ने सोचा। फिर उसे एक विचार आया। उसने दो बड़े बर्तन लिए और गट्टा पेर्चा (Gutta Percha) के कुछ पेड़ लेने जंगल चला गया। उसने भूरा रबर बनाया जिसके अन्दर गट्टा पेर्चा को छिपा दिया; और फिर उससे रबर का आदमी बन गया। मूँगफली के खेत में उसने चिपकाने वाले रबरमैन को रख दिया।

"अब मैं जान सकूँगा कि चोर कौन है," उसने खुद से कहा।

जब रात हुई और सभी लोग सो रहे थे, मकड़ा मुखिया के खेत में पहुँचा। वह उस जगह गया जहाँ मूँगफली थे और अचानक उसे वहाँ एक आदमी दिखा।

"ओह," उसने उस आदमी से कहा। "तुम यहाँ क्या कर रहे हो?"

उधर से कोई जवाब नहीं आया।

"तुम कौन हो?" मकड़े ने फिर कहा। "रात में तुम यहाँ क्या कर रहे हो?"

रबरमैन कुछ नहीं बोला।

मकड़े ने रबरमैन के सिर पर मारा और चीखा :

"तुम मेरा जवाब क्यों नहीं दे रहे हो?"

रबरमैन बहुत ही चिपचिपा था और मकड़ा उसके सिर से अपना हाथ खींच नहीं पाया।

"मुझे जाने दो! जाने दो मुझे!" मकड़ा चिल्लाया और दूसरे हाथ से रबरमैन पर वार किया और दूसरा हाथ भी रबरमैन के सिर पर चिपक गया। अब मकड़े को समझ में आया कि यह आदमी नहीं था। दूर जाने के लिए वह अपने पैर से कोशिश करने लगा, लेकिन उसका पैर भी रबरमैन से चिपक गया। अब मकड़ा बिल्कुल भी हिल-डुल नहीं पा रहा था।

"मैं भी कितना बेवकूफ हूँ," उसने खुद से कहा। "सुबह-सुबह जब सभी लोग आएँगे तो उन्हें पता चल जाएगा कि मैं चोर हूँ।"

बेचारा मकड़ा, सुबह मुखिया के नौकर ने उसे रबरमैन से अलग किया और मुखिया के पास ले गया... और उस दिन से मकड़ा अँधेरे में मुँह छुपाये रहता है और किसी से कुछ नहीं बोलता है, क्योंकि वह बहुत शर्मिन्दा था और अब उसके बच्चे और उसके बच्चे के बच्चे और उसके बच्चे के बच्चे के बच्चे हमेशा अँधेरे कोने में ही रहते हैं।

अनुवाद : नमिता

सुन्दर उपवन

डा. अलका हर्ष 'शिवालिका'

बच्चो, कभी छुट्टियों में दूर पहाड़ियों पर सैर को जाना। वहाँ तुम्हें स्वर्ग से भी सुन्दर उपवन मिलेगा। चारों ओर सुन्दरता बिखरी होगी। पशु-पक्षी, पेड़-पौधे, फल-फूल, नदियाँ-आकाश सभी अति मनोहारी। अति प्रफुल्लित। अति सुन्दर। और इन सबसे सुन्दर हवा में गूँजता किसी सुनहरी छोटी चिड़िया का मीठा गीत। जिसके बोल समझने में मैं तुम्हारी मदद करूँगी। हूंम्मऽ उमूम ऽऽ देखो, वो चिड़िया कह रही है—

"सुनो कहानी इस उपवन की
फल-फूलों से शोभित वन की
बूटा-बूटा यहाँ है सुन्दर
मोतियों भरा सुनहरा पोखर"

एक दिन पता नहीं कहाँ से इस सुन्दर उपवन में एक बेहद बदसूरत, काला-काला दैत्य जैसा मगरमच्छ आ गया। और सुनहरे पोखर में घुस गया। फिर तो मानों उपवन की सुन्दरता में दाग लग गया। वहाँ के सारे सुन्दर-सुन्दर जीव परेशान हो उठे। उन्हें उपवन की सुन्दरता खतरे में लगने लगी। वे सब मिलकर मगरमच्छ को उपवन से भगाने के लिये उससे लड़ाई करने लगे।

एक मगरमच्छ इधर जो आया
स्वर्ग से वन पे मातम छाया
सुन्दर खग मृग उखड़े सारे
कुरूप मच्छ पर बिगड़े सारे
रुपहली चुनर मयूर फैलाकर
"जा खदरौटे!" चीखा इतराकर

मोर की दुत्कार से मगरमच्छ की आँखों में आँसू आ गए। उसने पहली बार अपने लिये 'खदरौटे' शब्द सुना था। उसकी मायूसी ने उपवन के सुन्दर प्राणियों को घमण्ड से चूर कर दिया। अपनी सुन्दरता के घमण्ड में वे मगरमच्छ से और भी तेज-तेज इतरा के लड़ने लगे—

"तेरे मगरमच्छी आँसुओं का हम पे नहीं असर
तुझे भगा के ही दम लेंगे हम साथी सुन्दर
कितना बदसूरत है तू! ये तुझको नहीं खबर
उपवन के सौन्दर्य के धब्बे! जालिम तेरी नज़र।"

इस मौके का फायदा उठा, एक चालाक बाज, चुपके से आया। उसने मुँह में सुनहरी छोटी चिड़िया दबाई और आकाश में फुर्र से ओझल हो गया। छोटी चिड़िया अधमरी हो गयी। उसके साथी लड़ने में लगे थे। उसकी ओर किसी का ध्यान नहीं था। वो छटपटा के बाज के हलक की ओर सरकने लगी। अकुला के बाज ने चोंच खोल दी। छोटी चिड़िया सर्र से हवा में नीचे आने लगी। बाज उसे ढूँढने लगा। पर चिड़िया किसी खदरौटी काली

सतह पर टिक गयी। जब उसे होश आया उसकी जान सूख गयी। वो मगरमच्छ की पीठ पर बैठी थी। वो थर-थर काँपने लगी। बाज से गिरी, मगरमच्छ पर बैठी। अब तो मगरमच्छ मुझे खा जायेगा। परन्तु मगरमच्छ बोला–

"तुम रहो यहाँ पर जी भरकर
पीठ के कीड़े-मकोड़े खाकर
सुनहरे पोखर से प्यास बुझाकर
मुझे सुख होगा, तुम्हें सुख देकर।"

ये सुनकर चिड़िया की जान में जान आयी। उसने नज़रें उठाकर देखा कि उसके साथी अभी तक मगरमच्छ से लड़ रहे हैं। उसकी पीठ पर चिड़िया को रहते देख, वे चिड़िया के भी दुश्मन बन बैठे। उससे भी लड़ने लगे। ये सब देख, चिड़िया मीठा-मीठा कूक कर उन्हें समझाने की कोशिश करने लगी। उसकी कूक के मीठे बोल फिजा में गूँज उठे–

"सुन्दर जिनके जिस्म हैं वे तो
नयन सुख ही दे पाते क्षण को
पर सुख देते हैं जो मन को
सुन्दर करते जन वन को।"

सुनहरी चिड़िया के इन मीठे बोलों से, उसके साथियों के मन का मैल धुलने लगा। वे अधिक देर तक उससे गुस्सा नहीं रह सके। लड़ाई भूल वे मिठास के साथ चिड़िया की आपबीती सुनने लगे। चिड़िया गा रही थी–

"सुनो साथियो,
बाज की पकड़ से छूटी जब मैं
नभ से गिर मच्छ पे बैठी थी मैं
वरना जल में गिर पड़ती मैं
फिर ना कभी भी गा सकती मैं।"

सबने ध्यान से देखा। मगरमच्छ रो रहा था। पर उसके आँसू सुनहरे पोखर में गिर-गिर के सुनहरे हो गये थे। उसके तन की कुरुपता के साथ-साथ घमण्डी साथियों के मन की कुरुपता भी उनमें धुल गयी थी। सब जीव फिर से सुन्दर हो गये थे। और इसलिये खुश होकर एक साथ चिड़िया के स्वर में स्वर मिलाने लगे थे–

"हम साथी तन मन से सुन्दर
सबका घर ये उपवन सुन्दर।"

और यूँ सुन्दर उपवन को अपनी मनोहारी सुन्दरता फिर से वापस मिल गयी।

बच्चो, यदि तुम सुन्दर उपवन देखने दूर पहाड़ियों तक न जा सको, तो कोई बात नहीं। बस अपने चारों ओर गौर से देखना। कोई सुन्दर होगा और कोई तुमको सुन्दर लगेगा। और इस तरह दूर पहाड़ियों वाला, वो सुन्दर उपवन तुम्हारे आस-पास ही सिमट आएगा।
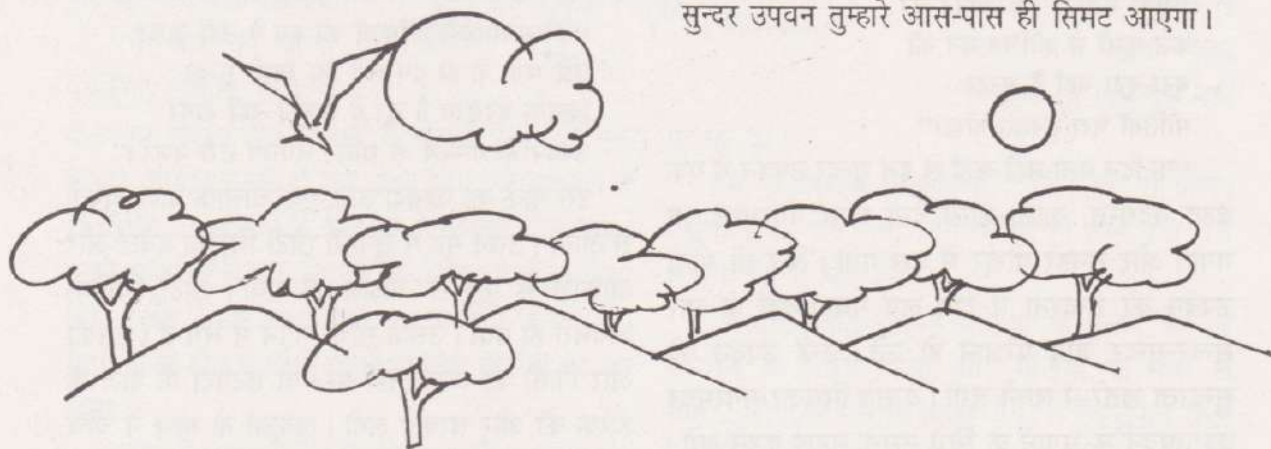
अब तुम मेरे भाई हो

गोलू ने साइकिल निकाली, उस पर बैठी और चल दी।

गुनगुनाते हुए—"चल मेरी साइकिल, सर सर सर! हवा मे उर जा फर फर फर!"

झाँपू भी उसके पीछे दौड़ा—"भुक-भूँ ऽऽ भुक-भूँ ऽऽ जैसे कह रहा हो—"मुझे भी बिठा लो।"

पर गोलू ने उसे पैर से धक्का दे दिया। डाँटा भी—"गन्दा कुत्ता! मैं तुझे नई बिठाऊँगी।"

गोलू ने साइकिल तेज कर दी। पर झाँपू उसके साथ—साथ दौड़ता रहा। दौड़ते-दौड़ते वे दोनों जंगल की ओर निकल गए। जंगल का रास्ता कच्चा था। रास्ते के दोनों ओर पेड़ ही पेड़ थे।

अचानक सामने से हाथी आ गया । उसने सूँड़ उठाई, जोर से चिंघाड़ा और गोलू की ओर दौड़ पड़ा। गोलू डरकर गिर पड़ी। उसकी साइकिल भी गिर गई।

यह देखकर झाँपू भौंकता हुआ तेजी से हाथी की ओर दौड़ा। उसने हाथी का रास्ता रोक लिया। हाथी का ध्यान गोलू की ओर से हट गया। वह झाँपू को सूँड़ से हटाने लगा। पर झाँपू डटा रहा।

झाँपू गोलू की ओर मुँह करके भौंका—"भुँभुक-भुँभुक!"—जैसे कह रहा हो—"गोलू भाग—गोलू भाग!"

इस बीच हाथी ने एक ओर से निकलना चाहा। पर झाँपू फिर भौंकता हुआ उसके आगे आ गया।

हाथी को रोककर उसने फिर गोलू की ओर मुँह किया—"भौं भुँभूँ—भौं भुँभूँ!"—जैसे कह रहा हो—"मैं निपटता हूँ इससे!"

गोलू ने उसकी बात मान ली। साइकिल उठाई और तेजी से घर की ओर भागी। गोलू ने एक बार मुड़कर पीछे देखा। हाथी ने झाँपू को सूँड़ में लपेट लिया था। फिर उसने उसे हवा में गोल-गोल चक्कर खिलाया। वह झाँपू को पटकना चाह रहा था। पर झाँपू भी कम नहीं था। उसने अपने दाँत हाथी की सूँड़ में गड़ा दिए। हाथी दर्द से बिलबिला गया। उसकी सूँड़ अपने आप नीचे की ओर लटक गई। झाँपू को मौका मिल गया। वह सरपट दौड़ा।

हाथी भी चिंघाड़ता हुआ उसके पीछे दौड़ा—"छोड़ूँगा नहीं।"

"कुछ भी कर ले। पकड़ नहीं पाएगा।"—झाँपू भी भौंकता हुआ उसे इधर-उधर दौड़ाने लगा।

झाँपू आगे। हाथी पीछे। पास-पास सटे दो पेड़ आए। झाँपू उनके बीच में से निकला और झाड़ियों में छुप गया। हाथी उसे ढूँढता रह गया।

उधर गोलू घर पहुँच गई। उसने साइकिल खड़ी की। फिर दरवाजे की सीढ़ियों पर बैठकर सोचने लगी—"हाथी ने झाँपू को पटक दिया होगा।"

तभी गोलू को एक कुत्ता दिखाई दिया। वह दौड़ता हुआ उसी की ओर आ रहा था।

"अरे, यह तो झाँपू है!"—गोलू की आँखें खुशी से चमक उठीं। वह उसकी ओर दौड़ी।

पास आकर झाँपू गोलू का गाल चाटने लगा—"भुकुम भूँ—भुकुम भूँ!"—जैसे कह रहा हो—"भगा दिया, मैंने, भगा दिया।"

गोलू ने भी झाँपू को अपनी बाहों में भर लिया। इसके बाद झाँपू साइकिल की ओर मुँह करके बोला—"भुँभू-भुँभू!"—जैसे कह रहा हो—"चलाओ न-चलाओ न।"

गोलू साइकिल पर बैठी और चल दी। झाँपू भी उसके पीछे दौड़ा—"भुक-भूँ ऽ ऽ—भुक-भूँ ऽ ऽ"—जैसे कह रहा हो—"मुझे भी बिठा लो।"

गोलू ने साइकिल धीमी कर दी और कहा—"बैठ जाओ। अब तुम मेरे भाई हो!"

झाँपू बोला—"भुँभुम भूँ-भुँभुम भूँ!"

गोलू गाने लगी—"चल मेरी साइकिल, सर सर सर! हवा में उर जा फर फर फर!"

—रावेन्द्रकुमार रवि

मेहनत का फल

मन्नू बन्दर अपनी मम्मी के लिये सरदर्द बना हुआ था। कल चिड़िया चाची के घोंसले से अण्डे उठा लाया था तो आज पास के खेत से केले उड़ा लाया। चिड़िया चाची तो बिचारी रो धोकर चुप हो गयीं। परन्तु सुना है खेत कालू भेड़िये का है। उसको दूर से अपनी ओर आते देख मम्मी ने मन्नू को घर से भगा दिया। बोलीं, "अपनी खैर चाहते हो तो अब कभी इधर का रुख नहीं करना।" मैं नहीं चाहती कि भेड़िया तुम्हें खा जाए।" मन्नू बिचारा सर पे पाँव रख के दूसरे गाँव कूच कर गया।

नई जगह अकेला मन्नू बहुत घबराया। उसे मम्मी की याद आने लगी। जब कभी उनके साथ जाता, उनके सारे पैसे खत्म करवा देता। अगर मना करतीं तो कभी रो के कभी चीख के जिद करता या कभी बिना पैसा दिये ही दुकान की चीज़े उठा के भागने लगता। मम्मी को फिर से पैसे आने तक फाका करना पड़ता। मगर अब क्या करे यहाँ तो न मम्मी हैं, न पैसे। भूख भी लग रही है और नींद भी। न कोई घर है न साथी। अब क्या करें!

तभी मन्नू को अपने पैर के नीचे गोल-गोल चमकीला पैसा दिखा। अहा! मन्नू की बाँछें खिल गयीं। वो दौड़कर आस-पास की टोह लेने लगा। कागा जी ब्रेड और अण्डे की दुकान खोल के बैठे ही थे कि मन्नू सिक्का ले के पहुँच गया, "काका जी छः अण्डे और एक डबलरोटी दीजिये।" सामान बाँध के कागा ने मन्नू का सिक्का देखा तो तुरन्त दोना उसके हाथ से खींच के बोला, "बेईमान धोखा देता है? बहुनी के समय खोटा सिक्का टरकाना चाहता है? चल भाग! कोई सामान नहीं मिलेगा।" एक तो भूख की मार ऊपर से ऐसा तिरस्कार! मन्नू तिलमिला कर रह गया।

कुछ तो करना होगा। ऐसा कैसे चलेगा! सामने हाथी दादा गन्ने चूसते दिखे। "दादा जी पाँव लागूँ! बड़ी भूख लगी है। कुछ गन्ने मुझे दे दीजिये।" हाथी घुड़क के बोला, क्यों? मेरी मेहनत की कमाई है। मैं तुझे मुफ्त में क्यों दे दूँ?" मन्नू ने तुरन्त अपना सिक्का दिखाया, "ये लीजिये, और इसके बदले गन्ना दे दीजिये।" हाथी ने सिक्का रखवा लिया ओर गन्ना मन्नू को दे दिया। भूखा मन्नू खुद को रोक नहीं पाया और वहीं खड़ा-खड़ा गन्ना चूसने लगा।

तभी उधर से कागा काका निकला, "क्यों मन्नू! अपना खोटा सिक्का हाथी दादा को टिका दिया क्या?

बड़ी मौज हो रही है!'' हाथी दादा के कान खड़े हो गए। उन्होंने अपनी लम्बी सूँड़ बढ़ा के मन्नू की गर्दन फँसा ली और कहने लगे, ''तेरी ये हिम्मत! मुझे उल्लू बनाता है! मेरे पास तो गन्नों का भण्डार लगा हुआ है। तू यूँ ही माँगता कि भूखा हूँ, भीख दे दीजिये, तो मैं तुझे मुफ्त में गन्ना दे देता। पर धोखेबाजी का मज़ा तो तुझे अवश्य चखाऊँगा।'' और इतना कह कर मन्नू को अपनी सूँड से हवा में उठा लिया और घुमा के ज़मीन पर पटकने ही वाला था कि मन्नू की घिघ्घी बँध गयी। वो गिड़ड़िया के माफी माँगने लगा, ''दादा जी अब कभी ऐसी गलती नहीं करूँगा। मुझे माफ़ कर दीजिये। इस दुनिया में अकेला हूँ और चार दिन से भूखा भी। आज से आप जो कहेंगे, मैं वैसा ही करूँगा। मेरी जान बख़्श दीजिये।'' तभी वहाँ चिड़िया चाची और किसान भेड़िया भी आ गए। मन्नू की ऐसी दशा देखकर हाथी से कहने लगे, ''ये एक नंम्बर का पाजी है। इसकी ऐसी ही दुर्दशा होनी चाहिये थी। इसने हमारा भी बहुत नुकसान किया है।'' तभी वहाँ उसकी मम्मी दिखाई दी, ''हाथी भाई मेरे बेटे की जान मत लीजिये। इसकी शैतानियों से मैं भी तंग हूँ। मगर चाहती हूँ कि आप इसे ऐसी सजा दें कि ये ज़िन्दगी भर सुधरा रहे। लोगों को उजाड़ने की जगह, उनके काम आए।''

ममता की कातर पुकार ने हाथी दादा की सूँड़ रोक दी। उन्होंने मन्नू को अपनी पीठ पर बिठा लिया। और कहने लगे, ''तुमने मुफ्त में गन्ना खाया है, अब तुम्हें मेरे खेतों में काम करना होगा। तुम्हारी दिन भर की कमाई मैं तुम्हारी मम्मी के हाथ में दूँगा। फिर जैसा वो कहेगी तुम्हें वैसा ही कहना होगा। जिस दिन तुमने उसका कहना टाला, मैं तुम्हें नौकरी से अलग कर दूँगा।'' मन्नू ने हाथ जोड़कर हाथी दादा की सारी बातें मान लीं और तुरन्त गन्ने के खेतों में काम पे जुट गया।

मम्मी अपने सपूत की कमाई पाकर प्रसन्न हो गयीं। उन्होंने चिड़िया चाची और भेड़िये के नुकसान भर दिये। मन्नू के स्कूल की फीस भी भर दी। अब मन्नू को पैसे की कीमत मालूम हो गयी थी। और लोगों के प्यार की भी। क्योंकि मेहनती मन्नू सबकी आँखों का तारा जो बन चुका था।

—डॉ. अलका हर्ष 'शिवालिका'

नाम में कुछ नहीं

एक छोटा-सा झबरे बालों वाला पिल्ला था, उसके माँ-बाप ने प्यार से उसका नाम रखा था मोती। मोती बड़ा होता जा रहा था साथ ही नई-नई बातें भी सीखता जा रहा था। वह बच्चों के साथ खेलता, दौड़ता, रिंग लपकता, काँटेदार झाड़ियों में से बच्चों की गेंद ला देता। वह बहुत खुश था।

परन्तु उसे एक ही गम था वह यह कि उसके माँ-बाप ने बहुत ही पुराने ढंग का नाम रखा था। वह जब अपने संगी साथियों के साथ खेलता तो देखता कि सबके नाम बड़े प्यारे-प्यारे हैं। किटी, एली, बॉब, जानी, डैश और भी बहुत से लेकिन उसका नाम मोती जैसे किसी दादा परदादा के जमाने का हो। सबके सामने इतना पुराना नाम पुकारा जाना उसे पसन्द नहीं था और किसी को बताने में भी उसे बहुत शर्म महसूस होती थी। अन्त में उसने निश्चय किया कि वह अपना नाम ही बदल डालेगा। वह अपनी माँ के पास गया और बोला, ''माँ मेरा यह नाम बदल दो मुझे यह मोती वोती अच्छा नहीं लगता।'' माँ ने प्यार से उसका मुँह चाटते हुए कहा, ''तेरा नाम तो इतना अच्छा है। मोती तो मूल्यवान होता है स्वच्छता और सुन्दरता उसका गुण है। सबके मन को मोहता है और गले की शोभा बनता है।''

''मैं यह सब नहीं जानता,'' उसने अपने पंजों को पटकते हुए कहा, ''मैं भी आजकल के फैशन का नाम रखूँगा।''

''तो जा तू ही नाम ढूँढ ला पर नाम का अर्थ होना चाहिए।'' माँ ने कहा, अब उछलता-उछलता मोती नाम ढूँढने निकला। सबसे पहले वह चिनचिन चूहे के पास पहुँचा और बोला, ''चिनचिन चाचा तुम्हारे नाम का अर्थ

क्या है?'' चिनचिन चूहा एकदम चौंक गया आजतक किसी ने उससे इस प्रकार का प्रश्न ही नहीं पूछा था। वह हाथ हिलाता हुआ बोला, ''अर्थ वर्थ मैं नहीं जानता बस सुन्दर सा नाम है। ऐसा लगता है जैसे घण्टियाँ बज रही हों।'' निराश मोती आगे चल दिया उसे पम्पी भालू मिला, ''दादा, दादा रुको मुझे जरा अपने नाम का अर्थ बताते जाओ।''

''नाम का अर्थ, इसका क्या करना नये फैशन का नाम है बस इससे ज्यादा मैं कुछ नहीं जानता।''

''पर कुछ मतलब भी तो होना चाहिए,'' मोती ने कहा।

''अरे मूरख विलायती चीज़ है तो बिना अर्थ के भी लाजवाब है।'' मूँछों पर ताव देते हुए पम्पी भालू ने कहा।

भालू दादा की हाँ में हाँ मिलाता वहाँ से आगे बढ़ा तो पिंकी बन्दरिया दिखायी दी।

''दीदी तुम्हारे नाम का अर्थ क्या है?'' मोती ने पूछा। ''गुलाबी रंग की'' कहकर पिंकी शर्मा गई। मोती ने पिंकी के सारे शरीर पर नज़र डाली पर कहीं भी गुलाबीपन नज़र नहीं आया।

''दीदी, तुम्हारा मुँह तो लाल है और शरीर पीला, अगर तुम्हारा नाम पीली होता या गोल्डी होता तो ज्यादा अच्छा होता।'' कहता आगे भाग लिया।

आगे उसे पॉपी भेड़िया मिला। उससे पूछने पर उसने बताया कि उसके नाम का अर्थ नहीं बल्कि एक बहुत सुन्दर फूल पर है।

''फूल पर'' उसने ऊपर से नीचे तक भेड़िये को देखा उसके उभरे तीखे दाँत भयानक चेहरा ऐसा कौन-सा फूल होता है। पर ऊपर से बोला, ''फूल होता है तब तो यह बहुत अच्छा नाम है, भैया यह कौन-सा फूल है।'' ''अरे इस फूल को खाने से नशा चढ़ने लगता है।'' गर्व से भेड़िये ने कहा। ''नशा चढ़ने लगता है, अरे भैया तुम्हें देखकर तो अच्छे अच्छों का नशा उतर जायेगा। नहीं यह भी नहीं चलेगा।'' कहता मोती सरपट भाग लिया।

आगे उसे गुडी कुत्ता मिला तो वह उसके संग हो लिया और दोनों बातें करते हुए चल दिये। एक तालाब के किनारे कुछ बच्चे गेंद खेल रहे थे। गेंद गुडी के पास आकर गिरी। गुडी ने पहले तो गेंद को दाँत मारकर फाड़ना चाहा पर वह एकदम कठोर थी बस नहीं चला तो उसने गेंद को पानी में लुढ़का दिया। बच्चे एकदम चिल्लाये और कंकड़ मारकर गुडी को भगाने लगे। डंडी लेकर कुछ बच्चे गेंद को पानी हिला हिलाकर पास बुला रहे थे। पर गेंद लहर के बनने से और दूर जा रही थी। जिस बच्चे की गेंद थी उसकी आँखों में आँसू आ गये थे, ''पता है अब पापा नहीं दिलायेंगे।''

मोती ने गुडी की तरफ देखा तो बुरा-सा मुँह बनाता हुआ बोला, ''चल घर चल बहुत देर हो रही है।''

पहले तो मोती बढ़ा लेकिन उससे बच्चों की उदासी देखी नहीं गई और वह तालाब में कूदकर उनकी गेंद निकाल लाया। सब बच्चों ने उसे प्यार से गोद में उठा लिया और मोती-मोती कहकर पुचकारने लगे। मोती ने दूर जाते गुडी की ओर देखा। उसके नाम का तो अर्थ है अच्छा पर जो दूसरों को दुख दे वह क्या अच्छा। सब बच्चे उसके पुराने ढंग के नाम की परवाह न करके उसे प्यार कर रहे थे। अब उसकी समझ में आ गया था कि नाम से कुछ नहीं होता। बच्चों की मोती-मोती की पुकार पर वह उछलता आ जाता था, वह खुश था अब उसने माँ से अपने नाम के लिए जिद करना छोड़ दिया था। उसे अपना नाम अच्छा लगने लगा था।

- डॉ. शशि गोयल

कविताएँ

ओस

जब चिड़िया चीं-चीं करती है
झटपट में बाहर आ जाता।
लाल लाल सूरज का गोला
धीरे-धीरे ऊपर आता।
अँगड़ाई ले लेकर कलियाँ
आलस छोड़ रही होती हैं।
मलमलकर अपनी आँखों को
चादर हटा रही होती हैं।
लेकिन सोच सोच कर मुझको
एक बात पर अचरज आता।
दूर-दूर तक आसमान पर
बादल नजर नहीं आता है।
माली काका रोज सबेरे
पौधों को पानी दे जाते।
पूरे दिन में प्यासे पौधे
सारा पानी पी पी जाते।
लेकिन फिर भी रोज सबेरे
पत्तों पर बूँदें पाता हूँ।
ठण्डी-ठण्डी हरी घास को
गीली गीली सी पाता हूँ।
दादी कहती रोज रात को
आसमान में परियाँ आतीं
खूब खेलती खूब नाचती
भर भर पानी खूब नहाती
मम्मी कहतीं तारों के संग
चन्दा दौड़ लगाता
उनके श्रम से बहा पसीना
अमृत बन नीचे आ जाता।

–डा. शशि गोयल

इच्छा

तमन्ना आसमाँ चूमूँ
गगन को हाथ से छू लूँ
चाँद सा ठण्डा हो जीवन
भले रवि सी किरण मुझमें
सितारे हाथ में मेरे
फिर भी न वक्त को भूलूँ
तमन्ना आसमाँ चूमूँ।
कदम धरती पर हो हर पल
भले ही मैं गगन छू लूँ
माथे पर तिलक मिट्टी का
मोती सा हर वक्त चमकूँ
ऊँचाई कुछ भी मैं पाऊँ
मगर मैं 'माँ, को न भूलूँ
भले ही आसमाँ चूमूँ
कभी भी 'माँ, को न भूलूँ
तमन्ना आसमाँ चूमूँ।

–चन्द्रेश्वर यादव

कविताएँ

गर्मी आई

गर्मी आई, गर्मी आई।
अच्छी खासी आफत लाई।।
गर्मी से व्याकुल सब रहते।
भनन-भनन मच्छर हैं करते।।
ऊँघ-ऊँघकर रात बिताई।
गर्मी आई, गर्मी आई।।
बस्ता दूर इन दिनों रहता।
सैर-सपाटे को मन करता।।
पर 'लू' से तबियत घबराई।
गर्मी आई, गर्मी आई।।
आग समान भवन हैं जलते।
फ्रिज, कूलर सब फीके पड़ते।।
रात और दिन चैन गवाई।
गर्मी आई, गर्मी आई।।

—अनिल द्विवेदी "तपन"

मौसम कितने

मुन्नी बोलो मौसम कितने?
घर में हम सब जन हैं जितने।
दादा जी कुछ रूखे-फीके,
ग्रीष्म जैसे तीखे-तीखे।
पापा जी यों खुश-खुश रहते,
वसन्त में जैसे गुल हैं खिलते।
वर्षा बरसे झम-झम-झम,
मुन्नी नाचे छम-छम-छम।
शिशिर न भाए दादी जी को,
बहुत सताए दादी जी को,
शरद ऋतु-सी ये हैं मम्मी,
थोड़ी खट्टी, थोड़ी मीठी।

□विष्णुप्रिया त्यागी

अच्छी बात नही है

हल्ला-गुल्ला हर दम करना
बंदिश कोई नहीं मानना
भैया-बहना से नित झगड़ना
बिल्कुल अच्छी बात नहीं है।

स्कूल में देरी से जाना
पाठ समय पर याद न करना
परीक्षा में नकल मारना
बिल्कुल अच्छी बात नहीं है।

ज्यादा बनना और सँवरना
सबसे लड़ ना और झगड़ ना
बात-बात में कुट्टी करना
बिल्कुल अच्छी बात नहीं है।

काम समय पर कभी न करना
ऊपर से फिर रौब जमाना
बढ़ -चढ़ कर बातें करना
बिल्कुल अच्छी बात नहीं है।

□राजकुमार 'राजन'

भइया लोगों की खट्टी-मीठी यादें!

बच्चो, हम सब बचपन के दौर से होकर गुज़रे हैं। आपकी तरह हमने भी अपने बचपन में तमाम शरारतें की हैं, तमाम मज़ेदार चीज़ें देखी हैं और बहुत मज़े किए हैं। हमने बचपन में और उसके बाद भी क्या-क्या गुल खिलाए हैं, आप सब जानेंगे तो हँसते-हँसते लोट-पोट हो जाएँगे! तो हम भइया लोग ऐसे ही कुछ किस्से-कहानी आपको बताते हैं।

-भइया लोग

जब मैंने मछली पकड़ी

—प्रसेन
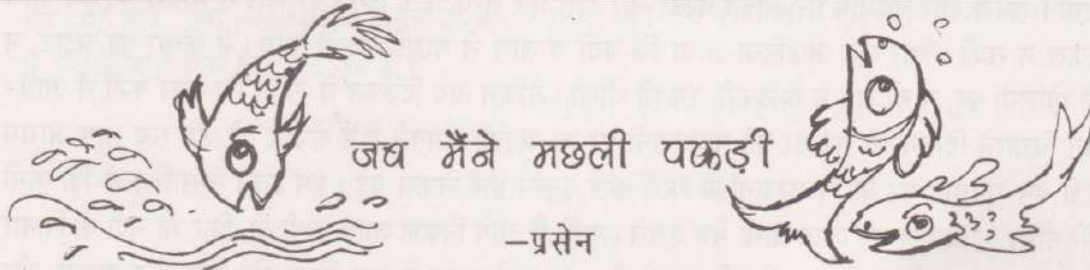
बात मेरे बचपन की है। जब मैं गाँव में रहता था। मेरा गाँव तीन तरफ से सई नदी से घिरा हुआ है। उन दिनों नदियों का पानी एकदम साफ हुआ करता था। काँच जैसा पर पारदर्शी। पानी इतना साफ होता था कि किनारे के पास जहाँ कम गहराई होती थी वहाँ की तलहटी साफ-साफ झलकती रहती थी। और पानी में तैरते रंग बिरंगे मछलियों के झुण्ड साफ-साफ दिखते, नदी में तैरना तो मुझे पसन्द था। पर किनारे बैठकर मछलियों का पानी में उछल-कूद करना, डरना, भागना देखना मुझे और भी अच्छा लगता था। अक्सर मैं शाम को नदी पर पहुँच जाता और किसी मछुआरे के पास जाकर बैठ जाता। और बड़े ध्यान से मछली मारने का तरीका देखा करता। जैसे ही काँटा बाहर आता मैं भागकर काँटे के पास पहुँच जाता। छोटी मछली होती तो लपककर पकड़ लेता। बड़ी मछलियाँ के दायें-बाये चक्कर लगाते हुए मछुआरे से कहता कि आप बस पकड़ लो, बस! एक बार छूने दो। कभी-कभी तो मछुआरे का झोला लेकर अटक जाता कि झोले की मछलियाँ दिखा दो। ऐसे ही एक दिन जब मैं मछलियों का खेल देख रहा था एकाएक ख्याल आया कि क्यों न मैं भी कटिया डालूँ। बस फिर क्या था उसी वक्त वहाँ से उठा। घर पहुँचते ही मम्मी से जिद करके पैसा लिया और आनन-फानन में कटिया तैयार, फिर मैंने अपने दोस्त आशुतोष के साथ पूरी योजना बनायी कि मछली सुबह-सुबह पकड़ी जाय क्योंकि इस समय मछलियाँ भूखी रहती हैं। तीन चार दिन तो अस मछलियों को नाश्ते में आटे की गोलियाँ खिलाई जाये और वापस आ जाया जाये ताकि उनकी आदत पड़ जाय। इन सूत्रों पर बाकायदे अमल करने के बाद हमने मछलियों के लिए चारे के रूप में केंचुआ चुना। और जिस दिन हमें मछली मारने जाना था उस दिन तड़के ही केचुएँ की तलाश में आँगन और बगीचे के केंचुओं की जान पर बन आई, बगीचे और आँगन के कोने में गड्ढों की लाइन लग गयी। इन गड्ढ़ों ने शाम को लौटने पर घर में जो बवण्डर तैयार किया, उसकी एक अलग ही कहानी है। फिलहाल, हम दो 'मछलीमार' निकल पड़े। नदी में काँटा फेंककर

बैठ गये। थोड़े से इंतजार के बाद काँटे की रस्सी में लगी लकड़ी जैसे ही हिली मेरे दिल की धड़कन तेज हो गयी। पर मुझे मछली मारने के सूत्र याद थे कि कम से कम तीन झटके पर रस्सी खींचनी चाहिए। एक पेशेवर मछुआरे की भाव-भंगिमा धारण किये हुए मैंने तीन झटकों की इन्तजार किया। तीसरा झटका लगते ही... काँटा एक ही झटके में बाहर... काँटे में न तो मछली न ही चारा... अब की बार नियम में थोड़ा बदलाव लाया। पहला झटका लगते ही काँटा खींच लिया। काँटे में केंचुआ तो था पर मछली नहीं। पर हम हार कहाँ मानने वाले थे। अगले दो घण्टे तक यह चलता रहा। नियम तो हमने बार-बार बदला परन्तु काँटा जब पानी से बाहर आता तो दो बातों के अतिरिक्त तीसरी बात नहीं हुई... या तो खाली काँटा... या चारा लगा काँटा। मछली का कहीं नामोनिशान न था।

आखिरकार हम मछलीमारों के सब्र का बाँध तब टूट गया जब हमारे केंचुए सारे के सारे खतम हो गये। हमने सारा सामान समेटा और चुपचाप घर आकर काँटा और डोरी एक तरफ फेंक दिए। पर दिल से मछली पकड़ने वाली बात निकल न सकी। फिर एक आइडिया आया कि क्यों न जाल से मछली पकड़ी जाय। न केंचुए का झंझट, न आटे की गोलियों का, न हर्र लगे न फिटकरी, रंग भी चोखा। लेकिन अब दिक्कत ये आयी कि जाल कहाँ से आये? तो सोचते विचारते दिमाग की सुई घर की मच्छरदानी पर जा अटकी। अगले दिन दोपहर को जब सब लोग आराम कर रहे थे हम चुपचाप घर की मच्छरदानी से चारों डण्डे अलग कर निकल पड़े। हम इतने उत्साहित थे कि कभी मुझसे मेरे दोस्त का चप्पल दब जाता कभी मेरा उससे। कभी मैं आगे निकल जाता कभी वो, फिर भी नदी के किनारे पहुँचने पर हम दुबारा पैदाइशी मछुवारे की शक्ल में नजर आये। हम ने तय किया कि बात-चीत इशारों और फुसफुसाहट में की जाये। हमने धीरे से पाँव उठाकर पानी में डाला धीरे से मच्छरदानी वाले हाथ को पानी में डाला। एकदम घात लगाये शिकारी की तरह। हाँ! यह बात और है कि हमारे शिकार पर कोई दूसरा शिकारी घात लगाये बैठा था। फिलहाल, धीरे-धीरे मच्छरदानी खिसकाते हुए हम किनारे तक लाये और फिर उसे उठा लिया। पानी झड़ने पर जब सूरज की रोशनी में मछलियों के शल्क चमके तो हम खुशी से उछल पड़े। हम झटाझट बाहर आये। किनारे रेत में गड्ढा खोदा (नदी के किनारे रेत को थोड़ा-सा ही खोदने पर पानी भर जाता है।) और मछली को उसमें छोड़ दिया। ताकि वे जिन्दा रहे। फिर पानी में घुस गये। अब बाहर आये तो हमारी मेहनत का रंग गाढ़ा था। 15-16 मछलियाँ हमारे मच्छरदानी पर उछल रही थी। अबकी हम रुककर मछलियों की पहचान करने लगे। ये रही मूँछों वाली मछली, अरे ये रही काँटें वाली मछली जिसके मारने पर बुखार आ जाता है अरे ये रही रोहू जो हमेशा बुरा सा मुँह बनाये रहती हैं और जो हमारे आकर्षण का मुख्य केन्द्र थी। गोल-मटोल रंग बिरंगी मछली जिसे हमने पहले कभी नहीं देखा था। अतः उसे हमने 'समुद्री मछली' घोषित किया। जो कि रास्ता भूलने की वजह से नई नदी में आ गयी थी। इस दूसरी खेप को लेकर जब हम गड्ढे तक पहुँचे तो गड्ढे का पानी काँच की तरह साफ तथा स्थिर था। उसमें से सारी मछलियाँ गायब थीं। पहले तो कुछ समझ नहीं आया फिर सोचा, हो सकता है कि गड्ढा पानी के काफी करीब है, इसलिए मछलियाँ उछल-उछल कर पुनः नदी में चली गयी हों। तो हमने अबकी गड्ढा नदी से काफी दूर बनाया। और सारी मछलियाँ उसमें डाल दी। "समुद्री मछली" के लिए हमने उसी गड्ढे के पास एक छोटा-सा अलग गड्ढा बनाया।

अब तक हम लोग रणनीति भूल चुके थे। मछलियों को लेकर तरह-तरह की योजना बना रहे थे कि मूँछों वाली मछली तथा रोहू को कुएँ में डाल देंगे। काँटे वाली मछली ने एक बार मुझे काँटे का स्वाद चखाया था तो मैं उससे नाराज था तो उसके लिए सोचा गया इसे कद्दू के पेड़ के नीचे डाल देंगे इससे खूब फल आयेंगे। अब रही समुद्री मछली तो सोचा कि एक मटके का आधा हिस्सा फोड़कर घर के आँगन में रखेंगे। यह योजना बनाते-बनाते हम किनारे पर पहुँच चुके थे। इस बार बहुत अधिक मछलियाँ नहीं आयी थीं। पर हम सन्तुष्ट थे। मछली गड्ढे में डालकर नहाने चले गये, नहा धोकर बड़ी सी पॉलिथीन में पानी भरा ताकि मछलियों को जिन्दा घर तक ले जाया जा सके।

हम गड्ढे के पास पहुँचे। तो 440 वोल्ट का करेण्ट हमारे शरीर में दौड़ गया। हम सकते में आ गये। गड्ढे

का पानी काँच की तरह साफ और स्थिर था। क्या सींगी क्या रोहू सब गायब, समुद्री मछली के गड्ढे में भी कोई हलचल नहीं....हिलने डुलने वाला कोई जीव नहीं सब खाली...। हमने जल्दी-जल्दी गड्ढा को खोदा कि कहीं ऐसा न हो कि मछली रेत में नीचे घुस गयी हो पर बेकार...। मछली को कोई नामोनिशान न था। मेरी सवालिया निगाह एक बार अपने दोस्त पर जाकर अटकी कि इसने कहीं न छुपा दिया हो। पर दोस्त तो मेरे साथ हर क्षण था, लेकिन यहाँ से मछलियाँ उछल कर नदीं में भी नहीं जा सकतीं। हम अपना मत्था मार रहे थे कि तभी मेरी निगाह 'शिकारियों के शिकारी', 'महामछलीमार' शान्त विनीत बगुले पर पड़ी जिसके चोंच में मूँछों वाली मछली की मूँछे अन्दर खिसक रही थी और वह कुछ ऐसे देख रहा था मानों मन ही मन मुस्करा रहा हो, माजरा समझ आते ही हमारे पैरों के नीचे की रेत गर्म हो गयी। आस-पास की हवा चुभने लगी। और मारे गुस्से के हम पत्थर उठाकर उसको मारने के लिए दौड़े। वह क्रेंच...क्रेंच। की आवाज करता उड़ गया। उसकी क्रेंच-क्रेंच की आवाज ऐसे लग रही थी मानों वह जोर-जोर से ठहाके लगा लगा कर हँस रहा हो।

हा! हा! हा! हा! हा! हा!

मूली...बेस्वाद!

–पवन

अरे ये कैसा शीर्षक है? मूली और वो भी बेस्वाद? आप यही सोच रहे होंगे कि अक्सर जो मूली सलाद के रूप में या पराठों में भर कर खाई जाती है, जिसकी कि भुज्जी भी बहुत से लोगों को पसन्द होती है। आखिर वही मूली बेस्वाद कैसे हो सकती है। खैर, यह बात तब की है, जब मैं सातवीं कक्षा में पढ़ता था। उन दिनों तक मुझे भी मूली बेहद स्वादिष्ट लगती थी। और इसे मैं बड़े चाव से खाता था। मगर अचानक मेरी जिन्दगी में एक ऐसी घटना घटी कि मूली खाना तो दूर उसका नाम लेना भी मुझे बुरा लगने लगा। मुझे जब भी कहीं मूली दिखाई देती तो लगता मानों वह मुझे चिढ़ा रही हो।

पाँचवीं कक्षा तक मेरा घर शहर के बीचों-बीच स्थित था। आस-पास रिहायशी इलाके, दुकानें, दफ्तर व बस स्टैण्ड आदि थे। मगर उसके बाद जब हमने घर बदल लिया तो नया घर शहर की सीमा पर स्थित था। अब घर के आस-पास कुछ गिने-चुने मकान ही थे और घर से थोड़ी ही दूरी पर खेत शुरू हो जाते थे। शाम के वक्त, मैं अपने मुहल्ले के दोस्तों के साथ घूमते-घूमते इन खेतों का भी दौरा कर आता था। खेतों में अधिकतर मूली व सूरजमुखी की खेती होती थी। जिन दोस्तों के साथ में घूमने जाता था वे शाम के वक्त खेत से मूलियाँ उखाड़ लेते थे और वहीं ट्यूब्वैल के पानी में धो लेते थे। घर आते वक्त सभी दोस्त मूलियों का लुत्फ उठाते हुए आते थे। उन दोस्तों के साथ बार-बार जाने पर मुझे इसमें कुछ भी असाधारण नहीं लगता था। मेरी नजरों में यह घटना सिर्फ इतनी ही थी कि खेत में जाओ मूली उखाड़ो और धोकर खाते हुए घर वापस आ जाओ। बाकी सभी पहलू मेरे लिए

ओझल थे। किसान की परवाह करना, खेत मालिक व किसान से नजरें बचा कर अपनी कार्यवाहियों को अजांम देना, खेत में चारों तरफ नजर दौड़ा कर मामला सुनिश्चित कर लेना व पकड़े जाने से बचने के लिए चौकन्ना रहना। ये सभी चीजें मेरी समझ से कोसों दूर थी।

कुछ दिनों बाद मेरा एक सहपाठी जिसका नाम अन्नामली था। वह मुझसे मिलने मेरे घर आया। घर पर कुछ देर बैठने के बाद उसने बाहर घूमने की इच्छा जताई। तब मैंने अपनी साइकिल उठाई और दोस्त को खेतों की तरफ ले गया। रास्ते में मैं बड़े गर्व के साथ उसे राह में पड़ने वाली चीजों के बारे में बता रहा था। जब हम दोनों मूली के खेतों के बीच पहुँचे तो मेरे दोस्त ने कहा कि यह तो मूली का खेत है। तो मैंने जवाब में हाँ कहते हुए पूछा कि खाओगे क्या? दोस्त ने हिचकते हुए कहा कि कौन लाएगा। तो मैंने जवाब देते हुए खेत में कदम बढ़ा दिए कि मैं अभी लेकर आता हूँ। आम चीजों से अनभिज्ञ मैं खेत में उतर गया। मैंने पहली मूली उखाड़ी और पूछा कि कैसी है। तो दोस्त ने कहा कि मूली पतली है। थोड़ी मोटी उखाड़ो। मैं मोटी मूली कि तलाश में इस कदर खेत के भीतर चलता गया कि किसान मुझे दूर से देख रहा है, यह मैं जान ही नहीं पाया। मैं बेहतर मूली की तलाश में मशगूल था कि किसान दूर कुटिया में से साइकिल पर सवार होकर कब हमारे पास आ पहुँचा, हमें मालूम ही नहीं पड़ा। अब तक मैं अपना काम पूरा कर चुका था। जैसे ही मैं साइकिलों की तरफ जाने के लिए वापस मुड़ा तो देखा कि वहाँ एक तगड़ा लम्बा चौड़ा सरदार खड़ा है। सरदार ने गुस्से में आग बबूला होते हुए पंजाबी भाषा में मुझसे कहा कि ओए तू ऐथे (ईधर) आ तैनूं (तुझे) मैं सीखांदा हां मूलीयां पट्टणा (उखाड़ना)। इतने भारी भरकम रीछ जैसे आदमी को देखकर मैं कुछ-कुछ समझ पाता कि इससे पहले ही सरदार ने मेरी तरफ बढ़कर मुझे अपने चौड़े व भारी हाथों से पकड़ लिया। मेरे दोनों हाथों को एक हाथ में पकड़ कर उसने दूसरे हाथ से दो-तीन हाथ मुझे रसीद कर दिए और पूछा कि अग्गे तों पट्टेगा। मैंने तुरन्त जवाब दिया कि नहीं मैं आगे से ऐसा नहीं करूँगा। इस बीच मेरा दोस्त यह सीन देख कर बगैर साइकिल के ही भाग लिया। 15-20 कदम दूर जाने पर उसे एहसास हुआ कि भागने से कुछ नहीं होने वाला साइकिल लेने तो वापस जाना ही पड़ेगा। सो वह रुका और वापस मुड़ा। सरदार ने कहा कि नहीं भज्ज लै (भाग ले) और भज्ज लै, मुड़के किऊं आऊंदा है। जैसे ही मेरा दोस्त नजदीक आया तो सरदार ने मुझे छोड़ उसे पकड़ लिया और कहा कि तूं किऊं खाली जाउदां ए, तूं वी प्रसादा लैंदा जा। और इस तरह सरदार ने भेदभाव न बरतते हुए पूर्ण रूप से समान वितरण का परिचय दिया। अब सरदार ने हम दोनों से नाम-पता पूछा व समझाना शुरू किया कि आगे से ऐसा मत करना अगर कभी मूली लेनी हो तो मुझ से कह कर ले लेना। मार रूपी प्रसाद व नसीहत देने के बाद सरदार ने हमें रुखसत किया। हम लोगों को बगैर मूली के जाता देख कर सरदार ने उखाड़ी गई मूलियाँ देते हुए कहा कि ओए ए तां लैंदा जा। स्वाभिमान के कारण हम दोनों मौन रहे। हमनें कोई जवाब नहीं दिया। ये देख सरदार ने उखाड़ी गई मूलियाँ साइकिल के पीछे रख दी। मैं और मेरा दोस्त चुपचाप साइकिलें व मूलियाँ लिए घर लौटने लगे। हम दोनों ही एक दूसरे से नजरें नहीं मिला रहे थे और न ही बातें कर रहे थे। घर नजदीक आता देख मैंने एक मूली अपने दोस्त की तरफ बढ़ा दी। दोनों ने अनमने मन से मूली का एक-एक टुकड़ा मुँह में भरा और अनमने मन से ही हल्का-हल्का चबाना शुरू किया। अब चबाते हुए हम दोनों ने नजरें उठाई और एक दूसरे की देखा। दोनों ने चबाना बन्द कर दिया। और एक दूसरे से पूछा कि कैसा लग रहा है। दोनों तरफ से एक ही भाव था। दोनों ने न के जवाब में मुण्डी हिलाई और मुँह में भरी मूली थूक दी। दोस्त ने कहा कि टेस्टी नहीं है। मैंने भी जवाब दिया हाँ अच्छी नहीं है, बेस्वाद है। और यह कह कर दोनों ने अपनी-अपनी मूलियाँ फेंक दी। कुछ दूर और चलने पर हम दोनों ने फिर नजरें उठाई और एक दूसरे को देखा। और अचानक ही... हँसी का फव्वारा छूट पड़ा।

मेरी मन पसन्द गजक

—योगेश

बच्चो, छोटेपन में हमें खाने की कोई चीज बहुत अच्छी लगती है। तुम्हें भी लगती होगी। किसी को टॉफी-चाकलेट अच्छे लगते हैं, किसी को आम, किसी को मिठाई तो किसी को कुछ और। भई मुझे तो बचपन में सबसे अच्छी लगती थी—गुड़-तिल वाली गजक। हाँ वहीं कुरकुरी रोल गजक जिसके बीच में खोया भरा होता है। वैसे तो पापा हफ्ते में एक या दो बार खाने की कोई चीज जरूर लाते थे, लेकिन जब मेरी फेवरेट गजक आती तो मैं अपने आप को रोक नहीं पाता था और आते ही थोड़ी-सी गजक खा जाता था।

घर में हम पाँच सदस्य है। मैं मेरे दो भाई और मम्मी-पापा। हमारे घर में जब भी कोई खाने की चीज आती तो पाँच हिस्सों में बराबर बाँट कर खाई जाती थी। पापा अक्सर रात को खाने के समय तक आते थे। और हम भाइयों की निगाहें उनके बैग पर होती थीं कि देखे पापा आज क्या खाने की चीज लाए हैं, वो जो भी चीज लाते थे हम तीन भाइयों में से किसी एक को कहते—"जाओ इसे अन्दर रसोई में रख आओ, खाना खाने के बाद सब मिलकर खायेंगे।" इस काम में मैं सबसे आगे रहता था। और खासकर उस दिन जब घर में गजक आती थी मैं गजक को रसोई में रखने जाता और चुपके से दो-तीन पीस खा जाता था। खाना खाने के बाद जब सबको बराबर चीज मिलती तो मैं सोचता कि किसी को पता ही नहीं चला कि गजक पहले भी खाई गई है। यह गजक मुझे इतनी पसन्द थी कि मैं मम्मी और पापा के हिस्से से भी थोड़ी गजक खा जाता था। मुझे लगता था कि दुनिया में इंसान ने जो सबसे अच्छी चीज बनाई वो है गुड़-तिल वाली गजक। इस तरह मेरी रसोई में चीजें चुपके से खाने की आदत बढ़ गई। अब पापा जब भी गजक लाते तो मैं रसोई में बहाने से जाता और हर बार थोड़ी सी गजक खा लेता। इस तरह एक दिन जब पापा गजक लाये तो मैंने जिम्मेदारी उठाते हुए गजक रसोई में पहुँचाई और मुट्ठी भर कर खा गया। आदत के चलते मैं थोड़ी-थोड़ी देर में रसोई में जाता और पॉलीथीन में हाथ डालता गजक मुँह में रखता और बिना मुँह खोले रसोई से बाहर आ जाता। खाना खाने के बाद जब मम्मी गजक लेकर आई तो वह थोड़ी सी ही बची थी। मम्मी को लगा कि आज घर में थोड़ी ही गजक आयी है। लेकिन मैं डर गया कि पापा को जरूर पता चल जायेगा कि इसमें से गजक खायी गयी है लेकिन पापा ने थोड़ी सी गजक देखकर भी कोई आश्चर्य प्रकट नहीं किया और सब ने मिलकर इसी थोड़ी सी गजक को खाया अगली रात फिर ढेर सारी गजक लेकर आये। मैं साचने लगा कि पापा पहले तो कभी लगातार गजक नहीं लाये, खैर आज भी अपने आप को रोक नहीं पाया और मैंने रसोई के कई चक्कर लगाये, क्यों, अरे भई गजक खाने के लिये? खाना खाने के बाद गजक सामने आयी तो पापा ने पॉलिथीन को देखा और पूछा इसमें से पहले गजक किसने खायी है। हम तीनों भाई चुप थे, जब उन्होंने फिर डाँटते हुए पूछा तो मैंने बता दिया मैं ही पहले गजक चुपके से खा चुका हूँ, उन्होंने कड़क आवाज में पूछा क्यों? तो मैंने डरते हुए कहा कि क्योंकि यह गजक मुझे बहुत अच्छी लगती है। तब उन्होंने कहा कि तुम्हें यह गजक इतनी ही पसन्द है तो तुम इसे जी भर कर खाओ। उन्होंने मम्मी और मेरे भाइयों से कहा कि वे लोग अपने-अपने कामों लग जायें या सो जायें और मुझसे कहा कि तुम आराम से बैठकर सारी गजक खाओ। थोड़ी देर अन्य सभी लोग अपने कार्यों में व्यस्त हो गए। अब टेबल के पास अकेला मैं बैठा था और मेरे सामने मेरी मनपसन्द गजक रखी थी। मैंने गजक का एक पीस उठाया और थोड़ा-सा खाया और फिर अचानक मैं रुक गया मैंने गजक वापस रख दी। आज मैं अपनी सबसे फेवरेट गजक नहीं खाना चाहता था, क्यों, तुम ही सोचो।

कविताएँ

पढ़ाई

डॉ. रीता हजेला 'आराधना'

भूगोल में गोल-गोल
घूम रहे थे हम,
चक्रवात में फँसे हुए
चकराए थे हम,

इतिहास की फिसलपट्टी पर,
फिसल रहे थे हम
इनकी उनकी कारस्तानी
परख रहे थे हम

यूँ तो तुगलकी कारनामे पढ़
हँस रहे थे हम
पर तारीखों के चक्कर में
फँस रहे थे हम

अपने मगज की चूलों को
कस रहे थे हम
क्या छोड़ें क्या याद करें को
समझ रहे थे हम

कसते-कसते
अकड़ गए हम

गणित के हाथों
जकड़ गए हम

गुणा भाग की
चल गई चक्की
जोड़ घटाने से हुई
धक्का मुक्की

इतने में अंग्रेजी आयी
काली माई याद दिलायी
दो पाटन के बीच में
साबुत ही पिस गये हम

पर जैसे ही हिन्दी आयी
लगा साँस में साँस है आयी,
सरल सरस सुबोध मातृभाषा
लगे कहानी नही पढ़ायी।
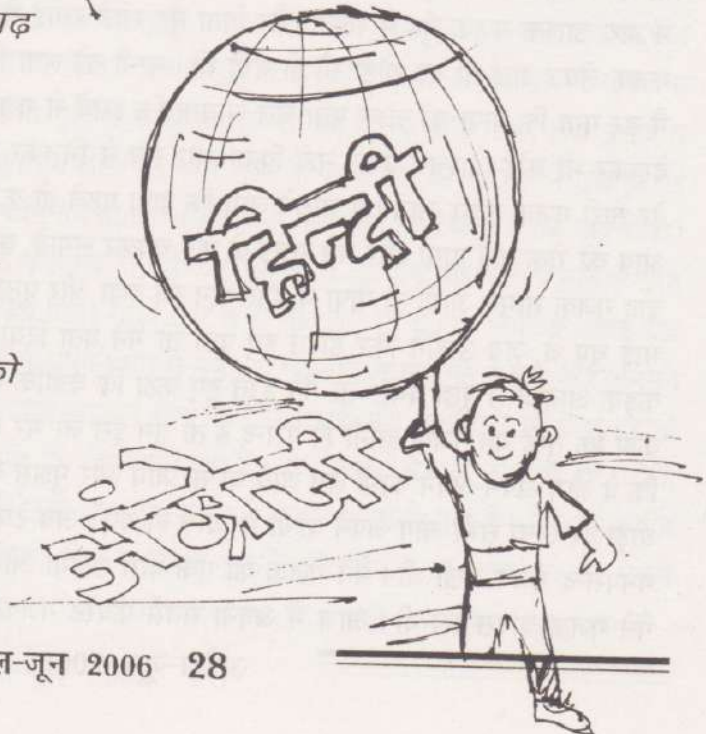
तरक्की

बुद्धूमल ने हँसकर कहा
मैंने करी तरक्की,
धौल जमा कर पीठ पर
बोले थे मास्टर झक्की,
एक नम्बर से फेल था पहले
अबकी हैं तीन नम्बरों से,
सुन कर बुद्धूमल की अम्मा
रह गई हक्की बक्की।

पकौड़ी

खुशबू उड़ी पकौड़ी की
मुँह में पानी आया,
छन छन उसका नाच तेल में
मेरे मन को भाया,
जैसे ही वो पड़ी प्लेट में
रोक न खुद को पाया,
झट पट रख ली पूरी मुँह में
जीभ को भी जलाया,
पर हाया हाय और फू फू करते
पूरा उसे पचाया।

अनुराग बाल कम्यून के बच्चों की कलम से

प्यारे दोस्तो,

अनुराग बाल पत्रिका के पिछले अंकों में तुमने 'अनुराग ट्रस्ट' के बारे में पढ़ा होगा। यह संस्था बच्चों के स्वस्थ सांस्कृतिक और वैज्ञानिक विकास के लिए बहुत से काम करती है। इन्हीं में से एक है अनुराग बाल कम्यून। यहाँ कई बच्चे एक साथ रहते हैं, पढ़ते हैं, नई-नई बातें सीखते हैं और एक स्वतंत्र माहौल में भविष्य के स्वतंत्र और जिम्मेदार नागरिक बनने की राह पर शुरुआती कदम रखते हैं। अभी गोरखपुर में चल रहे ऐसे कम्यून में रहने वाले बच्चों ने रचनाएँ लिखकर भेजी हैं। तुम लोग भी लिखकर भेज सकते हो।

-सम्पादक

दो बकरियाँ

हिमाचल की पहाड़ियों पर दो बकरियाँ रहती थी। दोनों की दोस्ती आपस में बनी रहती थी तथा दोनों एक दूसरे का ख्याल भी रखती थीं। दोनों बकरियाँ जहाँ भी जाती साथ ही जातीं। एक दिन दोनों बकरियाँ जंगल की ओर जा रही थीं कि रास्ते में घास का खेत आ मिला। दोनों बकरियों को बहुत भूख लगी थी। एक बकरी ने दूसरी बकरी से कहा आज मुझे भूख लगी है फिर दसरी बकरी ने भी कहा—चलो बहन, जरा हम अपनी भूख तो मिटा लें। दोनों बकरियाँ खेत में घुस गयी और फिर अपनी भूख मिटाकर चलती बनी। तभी एक बकरी वाला आदमी बकरियों का झुण्ड लेकर आता है।

दोनों बकरियाँ सोच में पड़ जाती हैं कि आखिर ये सब बकरियाँ कहाँ जा रही हैं तभी पहली बकरी ने कहा, लगता है यह आदमी इन बकरियों को पालता है और बकरियों से प्रेम भी करता है। दूसरी बकरी ने कहा, नहीं ये कैसे हो हो सकता है भला हम बकरियों को कौन पालेगा और प्रेम करेगा? तू तो मूर्ख ही है। आदमी को आदमी प्रेम करेगा न। फिर पहली बकरी बोली कोई-कोई ऐसे आदमी भी होते है, जो जानवरों को पालना तथा प्रेम करना पसन्द करते है। इसी बात पर दोनों बकरियाँ अड़ गई और आपस में लड़ने लगीं तभी बकरियों का झुण्ड उनके पास से गुजरता है और वे दोनों बकरियाँ भी उस झुण्ड में शामिल हो जाती है और बाकी बकरियों के साथ वे भी कैद खाने में चली जाती हैं।

पहली बकरी ने कहा—हम तो कैदखाने में आ गये है। दूसरी बकरी को भी यही महसूस हुआ फिर दोनों बकरियाँ आपस में बातें करने लगी दूसरी बकरी बोली क्यों बहन मैं ठीक कह रही थी न कि आदमी जानवरों से प्यार नहीं करते तभी पहली बकरी बोली खैर तुम ठीक कह रही थी अब तो हम दोनों को यहीं कैद खाने में गुजारना होगा। पहली बकरी दूसरी बकरी से बोली बहन अब क्या होगा मुझे तो बहुत भूख लगी है। खाने को मिलेगा भी या नहीं तभी बकरी वाला आदमी सभी बकरियों को सूखी घास खाने के लिए देता है। बाकी बकरियाँ तो घास खा लेंती है पर वह दो बकरियाँ सूखी
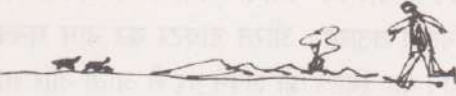
घास नहीं खातीं।

उस आदमी की निगाह उन दो बकरियों पर पड़ी। उसने उन दोनों बकरियों से पूछा तुम क्या स्पेशल हो जो खाना तुम दोनों के लिए अलग से मिलेगा? खाना तो यही खाना पड़ेगा, जो सब बकरियाँ खा रही हैं, नहीं तो भूखे रहो। पहली बोली भाई हमसे गलती हो गई हमने तो सोचा था कि आदमी बकरियों को पालता है तथा उनसे प्रेम भी करता है पर यह तो उलटा हुआ फिर दूसरी बकरी बोली हम दोनों यह सूखी घास नहीं खाएँगे। आदमी बोला ठीक है जरा मैं भी तो देखूँ कब तक सूखी घास नहीं खाओगी? पहली बकरी बोल उठी जब तक कि हम दोनों को हरी घास न मिल जाये तब तक। आदमी वहाँ से चलते बना पर जाते-जाते यह भूल गया कि उसे कैद खाने का गेट भी बन्द करना है। मौका देखते ही दोनों बकरियाँ आपस में बातें करती हैं कि अब तो यही भाग लेने का अच्छा मौका है पर दोनों बकरियाँ लकड़ी में बँधी थीं। दोनों बकरियों ने रस्सी तोड़ने की बहुत कोशिश की लेकिन असफल रहीं।

आखिरकार दोनों बकरियों ने रस्सी को चबाना शुरू कर दिया। रस्सी चबाने के कारण पहली बकरी की रस्सी टूट गई लेकिन बची दूसरी बकरी। अब उसका क्या होगा? पहली बोली तुम रहने दो रस्सी को काटना अब मैं काटती हूँ। पहली बकरी दूसरी बकरी को भी मुक्ति की राह पर ले आयी और दोनों बकरियाँ वहाँ से नौ दो ग्यारह हो चली। रास्ते में घास का वही खेत मिलता है जहाँ वह घास पहले चर रही थीं। दोनों बकरियों को याद आया कि वह यही रास्ता है जहाँ हम सब घास पहले चर रहे थे। पहली बकरी बोली चलो जरा एक बार फिर पेट पूजा कर ही लेते हैं और दोनों बकरियाँ घास को भर पेट चर ली फिर वहाँ से चलती बनी।

रास्ते में उन्हें एक भेड़िया मिलता है। भेड़िया बोला, बहन तुम कहाँ जा रही हो इस सुनसान रास्ते में लगता है तुम दोनों रास्ता भटक रही हो तभी पहली बकरी बोली, तुम मेरे रास्ते से हट जाओ फिर दूसरी बकरी ने भी जवाब दिया। यह बकरी ठीक कह रही है। भेड़िया को यह जवाब सुनते ही बहुत तेज गुस्सा आया और भेड़िया दोनों बकरियों से लड़ने में तुल गया। दोनों बकरियों ने भी आपस में योजना बना ली और भेड़िया तथा बकरियों के बीच घमासान युद्ध छिड़ गया। पहली बकरी ने भेड़िये को पीछे से सींग दे मारी और फिर दूसरी बकरी ने भी। भेड़िया पराजित होकर भाग लेता है और इस तरह दोनों बकरियाँ जीत जाती है। वह दोनों बकरियाँ अपने रास्ते पर चलती बनती हैं। चलते-चलते बकरियों को रास्ते में ही रात हो जाती है तथा दोनों बकरियों को झोपड़ी दिखाई पड़ती है। वह दोनों आपस में बातें करती हैं कि अब तो हम दोनों को रात इसी झोपड़ी में गुजारनी चाहिए। यह बात ठीक है कि नहीं? दूसरी बकरी ने जवाब दिया हाँ यह तो ठीक है चलो फिर अब देर किस बात की।

दोनों बकरियाँ उसी झोपड़ी में अपनी रात गुजारती हैं तथा दोनों बकरियों को नींद बहुत पक्की आ जाती है तथा सवेरा हो जाता है। दोनों को यह मालूम नहीं था कि यह झोपड़ी आखिर है किसकी? असल में तो यह झोपड़ी एक गरीब किसान की थी जो रात को अपने घर में परिवार के साथ रहता था तथा दिन में अपनी झोपड़ी में बैठकर खेतों की रखवाली करता था। सवेरा होते ही किसान अपने झोपड़ी में जाता है। किसान के जाते ही दोनों बकरियों की नींद खुल जाती है तथा किसान को देखते ही दोनों बकरियाँ डर जाती हैं फिर आपस में इशारे बाजी करती हैं।

यह देख किसान ने पूछा क्या हुआ? क्या तुम मुझे देखकर डर गई हो? अरे मैं तो एक मामूली किसान हूँ और मुझे बकरियों से प्रेम है तथा मैं बकरियों को पालना भी चाहता हूँ। क्या तुम दोनों मेरे पास रहना पसन्द करोगी? दोनों बकरियों ने जवाब हिचकिचा कर दिया, हाँ रहना तो पसन्द करेंगे लेकिन हमारी भी कुछ शर्ते है। आदमी ने पूछा बताओ अपनी शर्ते हम पूरा कर सकते हैं। दोनों बकरियों ने बारी-बारी से अपनी शर्ते कहीं यह शर्ते किसान ने मान ली और फिर दोनों बकरियाँ हमेशा के लिए किसान के घर में रहने लगी।

साहिल कुमार

मूर्खता

एक औरत थी। वह गाँव में रहती थी। उसका बहुत बड़ा मकान था। उस मकान में वह अकेली रहती थी। अकेले रहते-रहते वह बोर हो गयी थी। अगले दिन वह बाजार गयी। उसने पाँच सौ चूहे दस सौ रुपये में खरीद लिये। उसे चूहों के बारे में कुछ नहीं मालूम था। वे क्या खाते हैं। किससे डरते हैं। कैसे रहते हैं? उसने चूहों का नाम पहली बार सुना था। उसे चूहे सुन्दर लगे और उसने खरीद लिया। उसने यह भी नहीं सोचा कि चूहों को क्या खिलायेगी, कहाँ रखेगी।

जब वह घर पहुँची तो उसने सोचा मेरे पास तो इतना

बड़ा मकान है। कोई एक कमरा चूहों को दे दूँगी। औरत ने ऊपरी मंजिल में एक कमरा चूहों को दे दिया। वह बहुत खुश थी। उसने एक बाल्टी पानी भरकर उसी कमरे में रख दिया जिसमें चूहे थे। रोज उसी कमरे में मांस रख देती, लेकिन रोज-रोज मांस खाने से चूहों में जरूरी तत्वों की कमी हो गयी और उसकी कमी से तीन सौ चूहे बीमार हो गये। 100 चूहे पानी पीने लगे और बाल्टी के अन्दर गिर गये और मर गये।

जब औरत को पता चला कि तीन सौ चूहे बीमार हैं तो डाक्टर खोजने चल दी। वह बहुत दुखी थी। रास्ते में उसकी मुलाकात बिल्ले से हुई। दोनों ने एक-दूसरे को अपना-अपना परिचय बताया। बिल्ले ने अपना नाम डाक्टर बिल्ला बताया। औरत डाक्टर का नाम सुनकर उछल पड़ी। वह बिल्ले को अपने घर ले आयी और सारी बात बता दी। बिल्ले ने कहा मरीज दिखाओ और औरत ने चूहों को दिखाया। बिल्ले ने कहा मरीजों की हालत बहुत खराब है, आपरेशन करना पड़ेगा। बिल्ले की बातों से औरत सहमत थी और नीचे चली गयी। बिल्ले ने धीरे-धीरे सभी चूहों को खा लिया और नीचे गया। औरत से वह बोला अब सभी मरीज ठीक है।

औरत खुशी-खुशी ऊपर गयी और देखी तो रोती-रोती नीचे चली आयी।

शिवा

अनाथ लड़के की जिन्दगी

आठ वर्ष का दुर्गेश था तभी उसकी माता का देहान्त हो गया। और जब 6 वर्ष का था तब उसके पिता का देहान्त हो गया था। अब दुर्गेश अनाथ हो गया उसकी देखभाल भी कौन करता। उसका चाचा बहुत ही लालची था। दुर्गेश के दादा बहुत ही बूढ़े थे। वह भी दुर्गेश की देखभाल नहीं कर सकते थे उसका चाचा हमेशा उसकी बुराई करता रहता था। लेकिन अब तो दुर्गेश की माँ भी नहीं थी। दुर्गेश के चाचा का दोस्त बहुत अमीर था। उसका चाचा हमेशा उसके साथ रहता था और बात करता रहता था पहले तो उसे दुर्गेश के बारे में बताता रहता था पर अब उसे कोई डर नहीं था। एक दिन दुर्गेश का चाचा और उसका दोस्त बगीचे में बात कर रहा था तभी दुर्गेश पेड़ के पीछे से सब बात सुन रहा था। वह दुर्गेश को बेचने की कह रहा था कि एक सप्ताह बाद रविवार को मैं आ जाऊँगा और मैं इसे अपने घर में नौकर रख लूँगा। दुर्गेश चिन्ता में पड़ गया और वह सोच रहा था कि रविवार से पहले मैं कहीं भाग जाऊ। दुर्गेश भागने की कोशिश करता लेकिन उसे चिन्ता ये हो रही थी कि अगर मैं भाग न गया तो दादा जी का क्या होगा।

लेकिन उसे कभी भागने की हिम्मत होती तो भी नहीं

भाग पाता क्योंकि उसका चाचा उस पर कड़ी नजर रखता था। एक सप्ताह ऐसा ही चलता रहा। रविवार को दुर्गेश के चाचा का दोस्त दुर्गेश को लेने आ गया। और बेचारे दुर्गेश को ले गया। वहाँ पर उसे नौकर का काम दिया गया। वहाँ दुर्गेश को जूते साफ करने पड़ते। दुर्गेश के चाचा का दोस्त उस घर का मालिक था वह रोज सिनेमा हाल जाता। दुर्गेश को बहुत काम करना पड़ता। सुबह से लेकर शाम तक वह बुरी तरह थक जाता। उसे रात को जमीन पर सोने को मिलता। उसे बहुत मार पड़ती। जब मालिक सिनेमा हाल जाता तो उसे जूते साफ करके देने पड़ते। अगर कहीं जरा-सा भी गन्दा रह गया तो उसे बहुत बुरी तरह पीटा जाता बेचारा दुर्गेश अब बहुत ही दुबला-पतला हो गया था। मालिक का बेटा जब रोता था तब उसे ही चुप कराना पड़ता था। मालिक की पत्नी अगर कभी भी उसे रोता देखती तो नौकरानी से मरवाती। रोज ऐसे ही रात बीत जाती। दुर्गेश को अपने घर की बहुत याद आती। सबसे ज्यादा याद उसे अपनी माँ और दादा की आती बेचारा दुर्गेश दिन भर में इतना थक जाता कि जमीन पर लेटते ही नींद आ जाती।

एक दिन दुर्गेश काम करते-करते इतना थक गया कि उसे नींद आने लगी वह चावल चुन रहा था चावल चुनते-चुनते उसे नींद आ गयी। वह वहीं सो गया। मालिक ने उसे देख लिया और नौकरानी को बुलाया। और उसे इतनी मार पड़ी कि उसकी पीठ दर्द होने लगी। बेचारे दुर्गेश को भरपेट खाना भी नहीं मिलता उसे बासी रोटी दे दिया जाता। दुर्गेश अब बहुत कमजोर हो गया था वह खेल नहीं पाता अगर कभी बच्चों के साथ खेलने बाहर जाता तब उसे मार पड़ती। दुर्गेश इतना कमजोर हो गया कि कोई काम सही से कर नहीं पाता था। लेकिन जैसा करता उसे ही करना पड़ता था। मालिक सिनेमा हाल जा रहा था तब दुर्गेश से पालिश सही से नहीं हो पाया, जूते एकदम पुराने लग रहे थे। जल्दी-जल्दी में मालिक देख न पाया कि जूता साफ है या नहीं है। मालिक को सिनेमा हाल से वापस एक पार्टी में जाना था। वह सिनेमा हाल से हो करके पार्टी में गया। और पहले अपने सभी दोस्तो से गले मिला। दुर्गेश का चाचा भी आया था और उससे भी गले मिले और साथ ही टहलने लगे। जिसके यहाँ पार्टी थी उसने देखा कि मालिक इतना अमीर है तब भी पुराने और गन्दे जूते पहने है। उसे हँसी आयी और अपने साथियों को बुलाया और सब बात बता दी। जब डान्स होने वाला था तभी वे सब आ करके मालिक को चिढ़ाने लगे और सब हँस रहे थे। बहुत बुरी तरह मालिक की बेइजती की गयी। दुर्गेश के चाचा ने मालिक से कहा, दुर्गेश की खूब पिटाई करना मालिक ने घर पहुँचते ही दुर्गेश की पिटाई शुरू कर दी। दुर्गेश बेहोश हो कर वहीं गिर पड़ा। दूसरे दिन जब उसे होश आया तब वह चौंक गया कि मैं कहाँ हूँ। वह उठा और उसे प्यास लगी थी उसने पानी पीया। और देख रहा था कि मालिक के साथ सभी कहीं जाने के लिए तैयार हो रहे हैं। सभी चिड़ियाघर जाने के लिए तैयार हो रहे थे। तभी मालिक ने सबसे कहा कि जल्दी तय करो नहीं तो चिड़ियाघर का गेट बन्द हो जाएगा। तब मैंने जाना कि सब चिड़ियाघर जा रहे हैं। सभी चिड़ियाघर गये तब मैं भागने की कोशिश में था। लेकिन मुझको घर के अन्दर बन्द कर दिया और बाहर ताला बन्द करके चले गये। अब बेचारा दुर्गेश क्या करें। एक कोने में पड़ा घर की याद में रो रहा था।

अजय कुमार

कविताएँ

बन्दर का आना

बन्दर जब भी आते
खूब हुड़दंग मचाते
सब आकर चट कर जाते
फिर सबको आँख दिखाते
उनकी घुड़की से सब डर जाते
अजय, साहिल तो घर में घुस जाते
फिर बन्दर खूब मौज मनाते
सभी देखते ही रह जाते
और जब बन्दर कूच कर जाते
तब सब अपना हाल सुनाते

सचिन

मौसम

आज मौसम है सुनहरा
बादल भी छाया है गहरा
आँधी आई जोर
बच्चों ने मचाया शोर
बादल ने बरसाया पानी
भर गये नाले नदियाँ सारी
मेढ़क ने उछल कूद मचाई
मछली ने सरपट दौड़ लगाई
गुस्से में नदियाँ उफनाई
मेढ़क ने मछली को डाँट पिलाई
उसमें भी मेढ़क को आँख दिखाई
जब बादल ने देखा यह झगड़ा
कसकर उनको तब उसने रगड़ा
गरज-गरज कर फिर वह बोला
इस सुनहरे मौसम में क्यो झगड़ा करते हो।
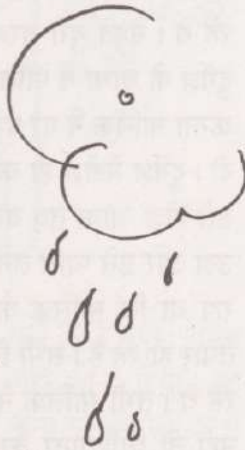
साहिल कुमार

पढ़ाकू गाय

लगी थी पुस्तक-प्रदर्शनी
गोल घर में।
लोग आ जा रहे थे
तभी अचानक कूद पड़ी
उसमें एक पढ़ाकू गाय
देख उसे लोग हुए हैरान

गाय ने देखा ग्रीटिंग कार्ड
और फिर पूछा उसका दाम
ऐसा अजूबा देखकर लोग हुए हैरान
अपनी ही दोस्त को
देखा उसने किताब में
किताब के पन्ने पर ज्यों ही देखी
उसने अपनी ही तस्वीर
खुशी से उछल पड़ी
सड़क पर जा हुई खड़ी

स्मृति / नन्दिता

जानकारी

चूजा अण्डे में से निकल आया
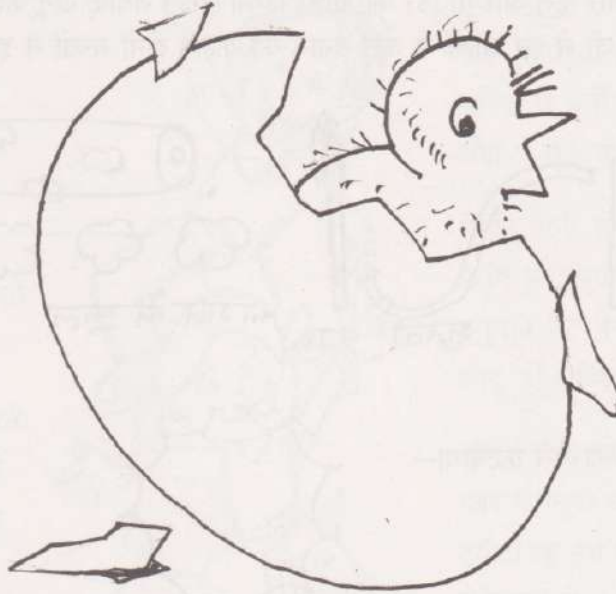
एक मुर्गी अण्डा सेने लगी। कई दिन बाद चूजा अण्डे के छिलके में से बाहर निकल आया। पहले पहल उसने अपने भीगे सिर को छिलके से बाहर निकाला और फिर चिं-चिं-चिं करने लगा।

इङइङ ने पूछा, "पापा, अण्डा मुर्गी का बच्चा कैसे बन गया?"

"पहले मैं तुम्हारी परीक्षा लेना चाहता हूँ," पापा ने मुस्कराते हुए कहा, "अण्डे में क्या-क्या चीज़ें होती हैं?"

"जर्दी और सफेदी," इङइङ ने चट से जवाब दिया।

"तुमने ठीक कहा। पर अण्डे में एक और चीज़ होती है जिसकी ओर तुम्हारा ध्यान कभी नहीं गया।"

"वह क्या चीज़ है?" बच्ची ने फिर पूछा।

पापा ने एक अण्डे को फोड़कर उसके अन्दर की सभी चीज़ें एक कटोरे में डालीं, फिर जर्दी के एक सिरे पर पड़े एक छोटे से सफेद बिन्दु की ओर इशारा करते हुए कहा, "देखो, यह बिन्दु काफी महत्वपूर्ण है। जब मुर्गी अण्डे को सेती है, तब अण्डे को उचित तापमान मिलता है (लगभग 39 डिग्री सेण्टीग्रेड) और जर्दी के इस सफेद बिन्दु का रूप रंग रोज-ब-रोज बदलता रहता है। दसवें दिन ही वह चूजे का मूल रूप ले लेता है। लेकिन इस समय उसे पर्याप्त पौष्टिकता मिलना आवश्यक है।"

"कौन सी पौष्टिकता," इङइङ यह जानने के लिये उतावली हो उठी।

"यह सफेदी और जर्दी ही उसकी पौष्टिकता है, जिसके सहारे मुर्गी का बच्चा अण्डे में लगातार पलता बढ़ता रहता है," पापा ने बताया, "जब करीब इक्कीस दिन बीत जाते हैं, तब मुर्गी के बच्चे की चोंच सख्त हो जाती है और चूजा अपनी छेनी जैसी चोंच से अण्डे के छिलके को फोड़कर बाहर निकल आता है।"

तब तक मुर्गी का बच्चा पूरी तरह अण्डे के बाहर निकल आया था और चिं-चिं-चिं करते हुए मुश्किल से चलने भी लगा था। इसे देखकर इङइङ बहुत खुश हुई।

पापा ने बेटी को यह भी बताया कि हमारे मुर्गी पालन फार्म में अण्डों को सेने के लिए अभी-अभी एक इलेक्ट्रोनिक यंत्र भी मँगाया गया है। बाद में इस यंत्र के सहारे बड़ी तादाद में मुर्गी के बच्चे पैदा हो सकेंगे।

प्लेट में शेर

क्राफ्ट की टीचर जी ने मीना और टीनू को अपने घर का इस्तेमाल कर फेंका हुआ सामान लाने को कहा। मीना कागज के चार फूल और पाउडर का खाली डिब्बा लाई। जबकि टीनू को एक सुतली, एक ब्रश और एक फाइल मिली। टीचर जी ने इन चीजों से कुछ बनाने को कहा। दोनों बच्चों ने इन चीजों को इस प्रकार रखा–
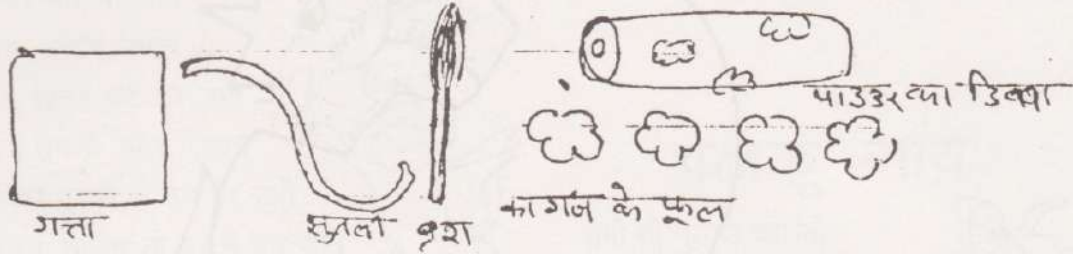
टीचर जी ने गत्ते को ऐसे कटवाया–
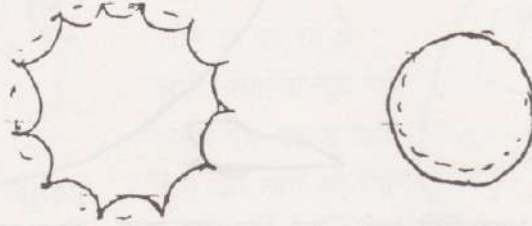
और उन्हें निम्नलिखित तरीके से जुड़वाया। और थोड़ी चित्रकारी कर दी।
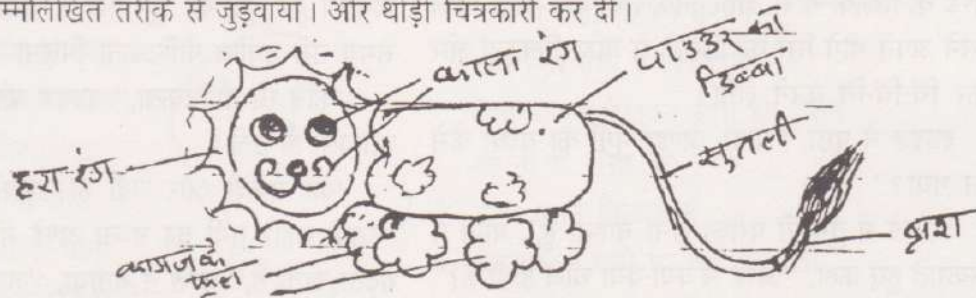
बच्चों ने देखा कि उनकी बची-खुची चीज़ों से एक सुन्दर शेर बन गया है।

मीना ने घर जाकर अपनी बर्थ डे पार्टी में एक शेरनुमा ब्रेड सैंडविच बना के मम्मी को चकित कर दिया।
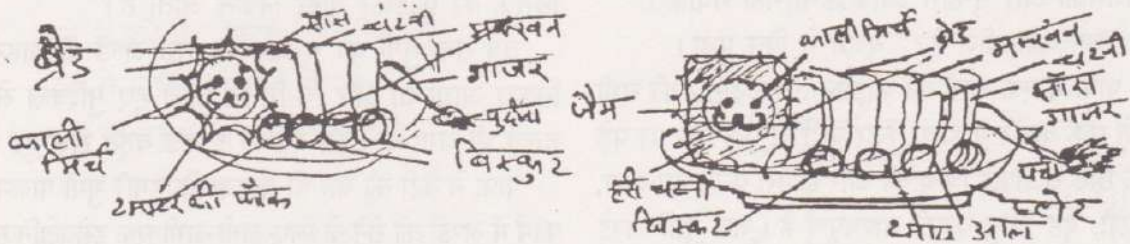
और टीनू ने बर्थ डे कार्ड पे एक शेर बनाकर मीना को हैप्पी बर्थ डे कहा। सब बच्चों ने खूब खाया पिया और हैप्पी बर्थ डे गाया।

–डॉ. अलका हर्ष 'शिवालिका'

नयी कलम से

कविताएँ

नन्हीं दुनिया

काश बड़ो की दुनिया में
एक नन्ही दुनिया होती
जग के बच्चे पर्यटक बनते
मज़े की छुट्टियाँ मनतीं

वर्षा धन सब संचित करते
पॉपकॉर्न टॉफियाँ बरसतीं
चॉकलेटों की खाद डालते
चिप्स की फलियाँ बोते

तैर तैर रसगुल्ले पकड़ते
ठण्डाई की नदियाँ बहतीं
सवारी मम्बो जम्बो पे करते
रेत बर्फियाँ होतीं

दूध दही में राफ्टिंग करते
केक पहाड़ियाँ होतीं
परियों से बंजी जापिंग करते
सेंटा पे सीटियाँ बजतीं

मिकी मिनी संग दौड़ते फिरते
पतंग सपोलियाँ लड़तीं
हनुमान बैट मैन से भिड़ते
जादू की झप्पियाँ होतीं

टॉय ट्रेन से प्लेन में चढ़ते
कार में प्लूटो चलते
ट्वीटी के संग गाते उड़ते
सेटेलाइट से फोटो उतरतीं

लौट के जब विद्यालय आते
निबन्ध में दुनियाँ झलकाते
टीचर जी को खुश कर देते
रिजल्ट की खुशियाँ मनती।

शिवम्

सेमल के फूलों से

ओ सेमल के प्यारे फूलों
लाल फूलों दुलारे फूलों
ऊपर नीला आकाश है
नीचे लाल रंग का तुम्हारा आभास है
चारों ओर फैले हैं हरे-हरे पत्ते
बीच में अद्‌भुत छटा बिखराते तुम इकलौते
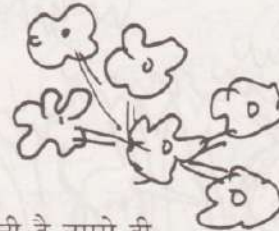
रुई बनती है तुमसे ही
जिसके कपड़े पहनते हम सब भी
मार्च-अप्रैल में ही क्यों आते हो
पूरे साल क्यों तरसाते हो।

विप्लव
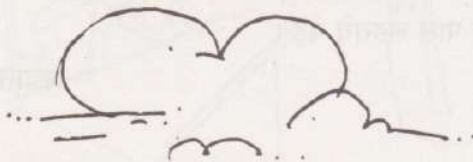
हम भी चलो लगायें पेड़

हमको लगते प्यारे पेड़
साथी बने हमारे पेड़
अच्छी लगती इनकी डाल
जिस पर अपना झूला डाल
हम नन्हें-मुन्नों की फौज
पेंग बढ़ाती, लेती मौज।

हवा पेड़ को करती प्यार
बादल देते इन्हें दुलार
हैं धरती के बच्चे पेड़
लगते सबको अच्छे पेड़।

इनकी पत्ती, इनकी छाल
इनकी टहनी, इनकी डाल
आती सब लोगों के काम
मिलते हैं फल-फूल तमाम
भरे टोकरी में फल लोग

खाते जी भर, बने निरोग।
भला सभी का करते पेड़
खुशियाँ जग में भरते पेड़
चह-चह गूँज रहा आकाश
पेड़ों पर चिड़ियों का वास।

बन्दर और गिलहरी रोज
यहीं उड़ाते दावत-भोज
उल्लू जी रहते चुपचाप
बकरी खाती इनके पात
उछल-कूद करती दिन-रात।

राही अपनी छोड़े राह
सुस्ताते हैं, पाते छाँह
हरे-भरे मुस्काते पेड़
काम सभी के आते पेड़
हम भी चलो लगायें पेड़
आस पास लहराये पेड़।

अज्ञात

चटपटे शिशु गीत

—डॉ. परशुराम शुक्ल

आम और चम्पा

सबको यही बताती है,
मेरी प्यारी प्यारी नानी।
आम फलों का राजा है,
चम्पा है फूलों की रानी।।

परियों की शहजादी

परियों की शहजादी अपने,
पंख लगा कर आती है।
रात खेलती है मेरे संग,
भोर भये उड़ जाती है।।
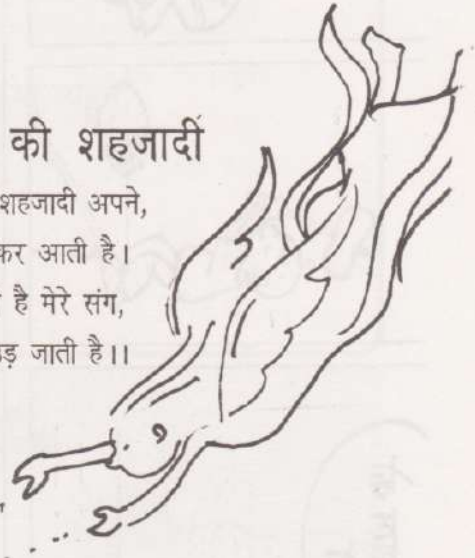
बच्चों की रेल

गीता, तारा, रूपा, मोहन।
सबने मिल कर रेल बनाई।
गार्ड बना राजू गाड़ी का,
इंजन बना मोहम्मद भाई।।

जोकर

मैं सर्कस का जोकर बच्चो!
हँसता और हँसाता हूँ।
छोटे-छोटे सब बच्चों को,
नये खेल दिखलाता हूँ।।

बच्चे

बच्चे हँसते गाते हैं।
जी भर मौज मनाते हैं।
लेकिन मिस के आते ही,
फौरन चुप हो जाते हैं।।

सच सच बात

सच सच बात बतायें हम।
देखा पेड़ चढ़ गये हम।
आया माली भागे हम,
फिसला पैर गिर गये हम।।

गोलू
गोलू इस नारियल को तोड़ लाओ
ठक
ठक!
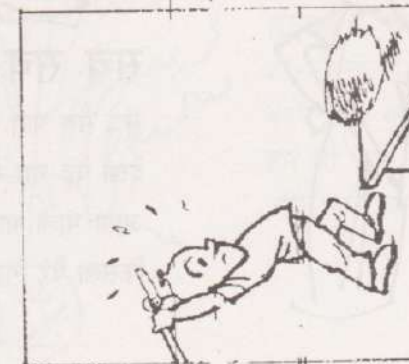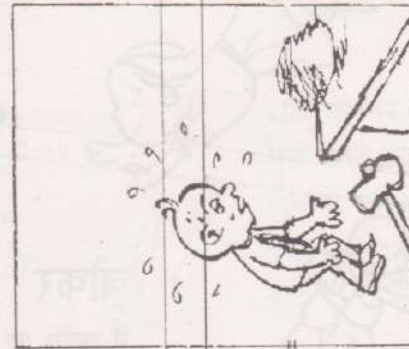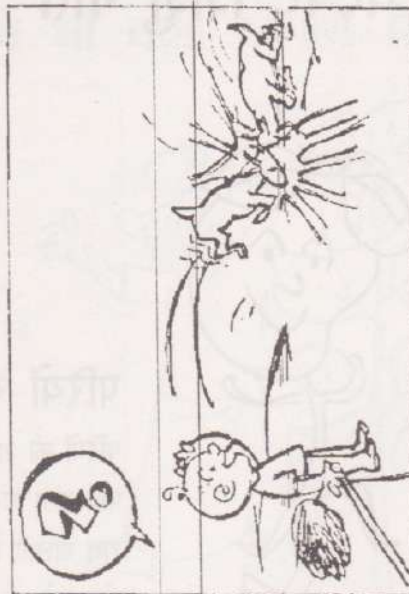
बेहतर इंसान बनाने का नन्हा प्रयास

नन्हे-मुन्नों द्वारा सम्पादित यह नन्हीं पुस्तिका **'नन्हीं कलम'** बहुत ही रोचक लगी। सिर्फ इसलिए नहीं कि बच्चे इसे निकालते हैं, इसलिए इसमें आकर्षण है, बल्कि एक गति और गठन भी पाठक को बाँध लेता है।

भाषा सीधी व सरल है, हाथ की लिखावट है इसलिए इसकी अपनी एक स्वाभाविकता, अपनी एक सहजता है और सबसे बड़ी बात एक पारदर्शिता है—बच्चों की सी खासियत; अन्दर और बाहर में कोई भेद नहीं है, वैसे भी लिखावट हमारे व्यक्तित्व का आईना होती है।

इन सबसे बढ़कर इस पत्रिका में जो सबसे खास बात है वह यह कि यह बड़े-बड़े साहित्यकारों द्वारा निकाली जाने वाली बड़ी-बड़ी पत्रिकाओं की तरह लिखने के लिए लिखी गयी 'रचना' मात्र नहीं है यह एक 'सकर्मक प्रयास' है। यह पढ़ने वालों को एक जीवन-दृष्टि भी दे रही है जैसे 'श्री प्रसाद बाबा के बुल्गारिया-यात्रा' के संस्मरण में जिन चीज़ों की चर्चा की गयी है चाहे वहाँ की साफ-सुथरी सड़कें हों, सोफिया-फूलों का शहर हो, कपड़े के जूतों का घर में प्रयोग और बाहर दूसरे तरह के जूतों का प्रयोग हो, एक लड़की का बाबा जी का सामान पहुँचाना हो, ये सब बच्चों को साफ-सफाई से रहने की शिक्षा देता है, पेड़-पौधों, फूल-पत्तियों की खूबसूरती की ओर बच्चों का ध्यान खींचता है उन्हें प्रकृति से जोड़ता है और बुजुर्गों की मदद करने की प्रेरणा देता है।

मृणाल के इण्टरव्यू में भी उसकी सबसे बड़ी चिन्ता है—'पर्यावरण'। मृणाल का उद्देश्य है 'राइटर' बनना। आम पाठक बच्चों के सामने एक नया संसार खुल रहा है—एक ऐसा संसार जिससे उनका परिचय ना उनके माँ-बाप ने कराया, ना उनकी टीचर ने। पूरी पत्रिका बच्चों की रचनात्मकता विकसित करने का एक बढ़िया प्लेटफार्म बन सकती है।

बच्चों ने राष्ट्रपति अब्दुल जे. कलाम को चिट्ठी लिखी (नन्हीं कलम, अंक-12)। इस उम्मीद के साथ, वे गरीब बच्चों की हालात सुधारने के लिए कुछ करेंगे। इस चिट्ठी का भले ही कोई असर हो ना हो, पर अन्य पढ़ने वाले बच्चों को इस चिट्ठी से यह जानने का मौका मिला होगा कि बच्चों के बीच भी कितनी गैर-बराबरी है—गाजियाबाद की झुग्गी-झोपड़ी में रहने वाले कक्षा 3 के रिंकू ने कहा है कि हम इतनी गन्दी जगह रहते हैं तब भी हमको यहाँ से भगा रहे हैं। बच्चों ने देख कर भी अगर इन चीजों को महसूस नहीं किया होगा कि क्यों उनके जैसे बच्चे दूसरों के घरों में जाकर बर्तन माँजते हैं, इन चिट्ठियों ने जरूर इन सवालों से उनके मन को भी कुरेदा होगा।

एक शब्द में कहूँ तो यह पत्रिका 'एक उम्मीद' है। बच्चों को बेहतर इंसान बनाने में, उन्हें प्रेमचन्द, लू-शुन, गोर्की, चेखव जैसा बनने में और बड़ों को उनके लिए लिखने के लिए प्रेरित करने में यह प्रभावी भूमिका निभायेगी।

गीतिका

नन्हीं कलम, प्रधान सम्पादकः श्याम सुशील
सम्पर्कः नन्हीं कलम, ए-13, जन युग
अपार्टमेण्ट्स, वसुन्धरा एनक्लेव, दिल्ली
110096 फोन : 22629220

बिन पुस्तक जीवन ऐसा
बिन खिड़की घर हो जैसा

अनुराग बाल पुस्तकालय

मनोरंजक, ज्ञानवर्द्धक, उत्कृष्ट पुस्तकों का संग्रह, कला, साहित्य, संस्कृति, विज्ञान, खेलों आदि पर रोचक किताबें और पत्र-पत्रिकाएँ, प्रेरक जीवनियाँ, देश-विदेश का चुनिन्दा बढ़िया साहित्य

सोमवार से शनिवार, शाम तीन से सात बजे तक
डी-68, निरालानगर, (गोमती मोटर्स के सामने) लखनऊ-226020

अनुराग ट्रस्ट

अनुराग ट्रस्ट की दिलचस्प किताबें पढ़ो!

बाज़ का गीत	मक्सिम गोर्की	15 रुपये
एक छोटे लड़के और एक छोटी लड़की की कहानी जो ठण्ड में ठिठुर कर मरे नहीं	मक्सिम गोर्की	15 रुपये
नन्हा राजकुमार	आतुआन द सैंतेग्जूपेरी	40 रुपये
वांका	अन्तोन चेखव	15 रुपये
तोता	रवीन्द्रनाथ टैगोर	15 रुपये
काबुलीवाला	रवीन्द्रनाथ टैगोर	15 रुपये
पोस्टमास्टर	रवीन्द्रनाथ टैगोर	15 रुपये
दिमाग कैसे काम करता है	किशोर	20 रुपये
दो बैलों की कथा	प्रेमचन्द	20 रुपये
रामलीला	प्रेमचन्द	15 रुपये
लॉटरी	प्रेमचन्द	15 रुपये
बड़े भाई साहब	प्रेमचन्द	15 रुपये
मोटेराम शास्त्री	प्रेमचन्द	20 रुपये
हार की जीत	सुदर्शन	15 रुपये
बहादुर	अमरकान्त	10 रुपये
इवान	व्लादीमिर बोगोमोलोव	40 रुपये
आश्चर्य लोक में एलिस (नाटक)	लुइस कैरोल	25 रुपये
झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई (नाटक)	वृन्दावनलाल वर्मा	25 रुपये
दोन किहोते (नाटक)	सर्वान्तेस	20 रुपये
नन्हे गुदड़ीलाल के साहसिक कारमाने	सुन याओ च्युन	40 रुपये
उल्टा दरख्त	कृश्नचन्दर	35 रुपये
चमकता लाल सितारा	ली शिन-थ्येन	50 रुपये

अनुराग ट्रस्ट के सभी प्रकाशनों के मुख्य वितरक — जनचेतना, डी-68, निरालानगर, लखनऊ-226020